वार्षिक रु. २००, मूल्य रु. २५

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम
रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६३ अंक ४ अप्रैल २०२५

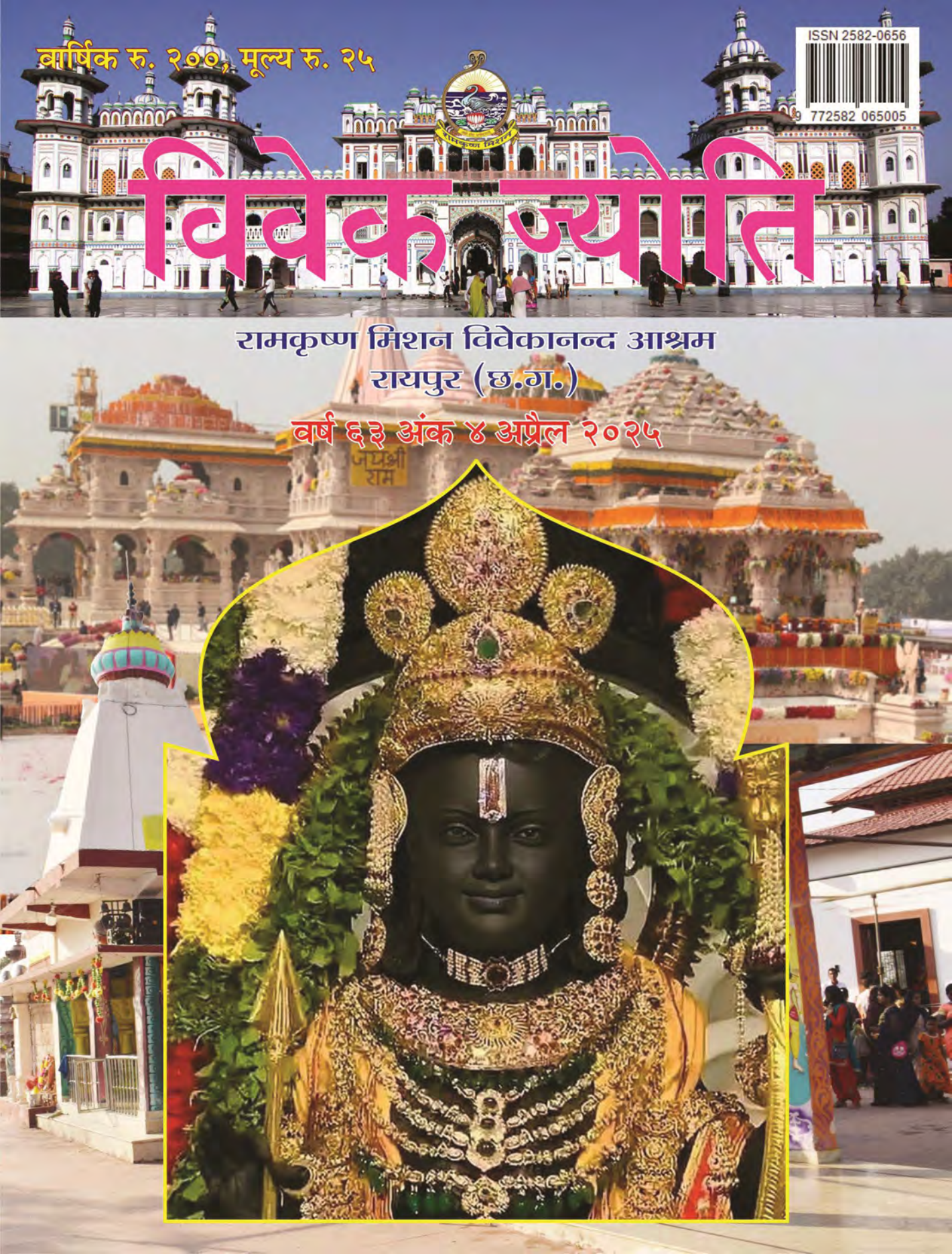

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६३

अंक ४

विवेक-ज्योति

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

चैत्र, सम्वत् २०८२

अप्रैल, २०२५

अनुक्रमणिका

* भक्ति प्राप्त करने का एक उपाय है ईश्वर का बारम्बार नाम-जप : विवेकानन्द १५०
* श्रीरामकृष्ण के रामलला (स्वामी उरुक्रमानन्द) १५३
* राम-नवमी (स्वामी मैथिलीशरण) १५५
* लोक जीवन में श्रीराम (सीमाहरी शर्मा) १५७
* (बच्चों का आंगन) राम-नाम ने तुलसी का जीवन बदल दिया (श्रीमती मिताली सिंह) १६३
* हिन्दी में रामकाव्य की परम्परा (डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि') १६४
* (युवा प्रांगण) जीवन को सकारात्मक और सार्थक कैसे बनाएँ (स्वामी गुणदानन्द) १६७
* छत्तीसगढ़ की लोक परम्परा में श्रीराम (डॉ. संजय अलंग) १७०
* मानवीय आदर्शों के प्रतिमान भगवान राम (डॉ. रमेश चन्द्र नैनवाल) १७५
* स्वामी ब्रह्मानन्द और भुवनेश्वर (स्वामी तन्निष्ठानन्द) १७८
* रामकथा की वैश्विक परम्परा (जी.एस.केसरवानी) १८१
* चोर और हीरा की कहानी (स्वामी सर्वप्रियानन्द) १८७
* (भजन एवं कविता) कर ले बजरंगी से प्रीत (सदाराम सिन्हा 'स्नेही') १६२, श्रीरामकृष्ण-स्तुति (डॉ. रामकुमार गौड़) १६९, * अवधेश्वर प्रभु हरे हरे (डॉ. अनिल कुमार 'फतेहपुरी') १७४, * धरती पर लो अवतार राम (गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र') १७६, * हमारे इष्ट श्रीगणेश (सोनल मंजु श्री ओमर) १७७, * श्रीराम राम जय राम राम (डॉ. ओमप्रकाश वर्मा) १८४
* पुस्तक समीक्षा १८९

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) १४९
पुरखों की थाती १४९
सम्पादकीय १५१
रामगीता १६०
प्रश्नोपनिषद् १६६
श्रीरामकृष्ण-गीता १७७
गीतातत्त्व-चिन्तन १८२
साधुओं के पावन प्रसंग १८५
समाचार और सूचनाएँ १९०

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : ***०९८२७१ ९७५३५*** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक)
रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति २५/-	२००/-	१०००/-	२०००/-
विदेशो में (हवाई डाक से)	६० यू.एस. डॉलर	३०० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिए	३००/-	१५००/-	

भारत में रजिस्टर्ड पोस्ट से माँगने का शुल्क प्रति अंक अतिरिक्त ३०/- देय होगा ।

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : विवेकानन्द आश्रम,रायपुर,छ.ग.
अकाउण्ट नम्बर : 1385116124
IFSC : CBIN0280804

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

आवरण पृष्ठ पर रामलला की मूर्ति अयोध्या की है तथा राम मन्दिर, अयोध्या, जनकपुरी मन्दिर, नेपाल और माता कौशल्या मन्दिर, चन्द्रखुरी, छ.ग. को दर्शाया गया है।

अप्रैल माह के जयन्ती और त्यौहार

०६ रामनवमी
१० महावीर जयन्ती
८,२४ एकादशी

विवेक-ज्योति के सदस्य बनाएँ

प्रिय मित्र,

युगावतार श्रीरामकृष्ण और विश्ववन्द्य आचार्य स्वामी विवेकानन्द के आविर्भाव से विश्व-इतिहास के एक अभिनव युग का सूत्रपात हुआ है। इससे गत एक शताब्दी से भारतीय जन-जीवन की प्रत्येक विधा में एक नव-जीवन का संचार हो रहा है। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, ईसा, मुहम्मद, शंकराचार्य, चैतन्य, नानक तथा रामकृष्ण-विवेकानन्द, आदि कालजयी विभूतियों के जीवन और कार्य अल्पकालिक होते हुए भी शाश्वत प्रभावकारी एवं प्रेरक होते हैं और सहस्त्रों वर्षों तक कोटि-कोटि लोगों की आस्था, श्रद्धा तथा प्रेरणा के केन्द्र-बिन्दु बनकर विश्व का असीम कल्याण करते हैं। श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा नित्य उत्तरोत्तर व्यापक होती हुई, भारतवर्ष सहित सम्पूर्ण विश्ववासियों में परस्पर सद्भाव को अनुप्राणित कर रही है।

भारत की सनातन वैदिक परम्परा, मध्यकालीन हिन्दू संस्कृति तथा श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द के सार्वजनीन उदार सन्देश का प्रचार-प्रसार करने के लिए स्वामीजी के जन्म-शताब्दी वर्ष १९६३ ई. से 'विवेक-ज्योति' पत्रिका को त्रैमासिक रूप में आरम्भ किया गया था, जो १९९९ से मासिक होकर गत ६२ वर्षों से निरन्तर प्रज्वलित रहकर भारत के कोने-कोने में बिखरे अपने सहस्त्रों प्रेमियों का हृदय आलोकित करती आ रही है। आज के संक्रमण-काल में, जब असहिष्णुता तथा कट्टरतावाद की आसुरी शक्तियाँ सुरसा के समान अपने मुख फैलाए पूरी विश्व-सभ्यता को निगल जाने के लिए आतुर हैं, इस 'युगधर्म' के प्रचार रूपी पुण्यकार्य में सहयोगी होकर इसे घर-घर पहुँचाने में क्या आप भी हमारा हाथ नहीं बँटायेंगे? आपसे हमारा हार्दिक अनुरोध है कि कम-से-कम पाँच नये सदस्यों को 'विवेक-ज्योति' परिवार में सम्मिलित कराने का संकल्प आप अवश्य लें। **– व्यवस्थापक**

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन नि:शुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

क्रमांक	विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना के सहयोग कर्ता	प्राप्त-कर्ता (पुस्तकालय/संस्थान)
७२६.	डॉ. बी.एल. सोनेकर, रविशंकर वि.वि. रायपुर (छ.ग.)	प्राचार्य, सरस्वती शिशु मन्दिर तेंदुकोना-बागबहरा-महासमुंद (छ.ग.)
७२७.	श्री सुभाषचंद्र दत्त, दीपक नगर, दुर्ग (छ.ग.)	रामदर्शन इस्टीट्यूट ऑफ इजुकेशन, जंघोरा, महासमुंद (छ.ग.)

रामकृष्ण मिशन आश्रम,

मोराबादी, राँची - 834008 (1927-2027),

e-mail : ranchi.morabadi@rkmm.org, Web : www.rkmranchi.org

श्रीरामकृष्ण मन्दिर नवनिर्माण के लिए विनम्र निवेदन

भगवान श्रीरामकृष्ण देव के अन्तरंग शिष्य श्रीमत् स्वामी सुबोधानन्द जी महाराज के चरण रज से पवित्र तथा श्रीश्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य एवं रामकृष्ण संघ के आठवें संघाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज की तपस्थली ''रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, राँची'' की स्थापना 1927 में हुई थी। शीघ्र ही वर्ष 2027 ई. में इस आश्रम की स्थापना का शताब्दी वर्ष प्रभु कृपा से हर्ष और उल्लास के साथ मनाया जाएगा । रामकृष्ण संघ के 11 वें संघाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी गंभीरानन्द जी महाराज के तपस्या से पवित्र इस आश्रम हेतु हम सभी अनुरागी, भक्तों और शुभ-चिन्तकों के लिए सेवा-यज्ञ में आहुति प्रदान करने का यह परम-पवित्र अवसर है । आश्रम के इस शताब्दी वर्ष में विशेषकर राँची जिला के निकवटर्वी गाँवों में आदिवासी जनजाति के कल्याण के साथ-साथ उनके सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम का आयोजन श्रीश्रीठाकुर, श्रीमाँ तथा स्वामीजी द्वारा प्रदत्त पथ के माध्यम से हो रहा है ।

आश्रम परिसर में श्रीश्रीठाकुर, श्रीश्रीमाँ तथा स्वामीजी का वर्तमान मन्दिर अत्यन्त छोटा तथा भग्नावस्था में है । अतः मन्दिर का नव निर्माण अनिवार्य है इसके साथ ही साथ आश्रम परिसर के परिदृश्य (लैंड स्केपिंग) में भी आवश्यक सुधार अपेक्षित है। इसके अलावा साधु निवास, रसोई घर एवं भोजनालय भी प्रस्तावित है । इस विस्तार के लिए मनुमानित लागत निम्न प्रकार है :

कं.सं.	निर्माण	क्षेत्रफल (वर्ग फीट में)	प्रस्ताव	अनुमानित लागत (करोड़ में)
1.	मन्दिर तथा लैंड स्केप	15,198	दो तलों में निर्माण तथा परिसर का सौंदर्यीकरण	6.0
2.	साधु निवास, रसोई घर एवं भोजनालय	7,500	वर्तमान साधु निवास के ऊपर एक तल का निर्माण, रसोईघर, भोजनालय का पुनर्निमाण	1.5
			कुल लागत	7.5

इस शताब्दी वर्ष के अवसर पर सभी भक्तों से अनुरोध है कि कृपया इस महत्त्वपूर्ण कार्य में आप यथासंभव योगदान कर पुण्य के भागी बनें ।

ध्यातव्य : प्रदत्त दान आयकर की धारा 80 जी के अन्तर्गत करमुक्त है। एक लाख से अधिक दानदाताओं का नाम मन्दिर परिसर पर अंकित होगा । दानकर्ताओं को 4 श्रेणियों में सम्मानित किया जाएगा ।

1) रजत श्रेणी : रुपये 1 लाख से 5 लाख तक

2) स्वर्ण श्रेणी : रुपये 5 लाख से अधिक व 10 लाख तक

3) हीरक श्रेणी : रुपये 10 लाख से अधिक व 20 लाख तक

4) प्लेटेनियम श्रेणी : रु. 20 लाख से अधिक

निवेदन : मन्दिर निर्माण हेतु सहयोग राशि निम्नलिखित बैंक खाते के माध्यम से कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किये जायेंगे ।

Click Below fro Online Donation :
https://bit.ly/317 lzyh
Scan the below given QR Code to log into our Online Donation Site

Account Name : Ramakrishna Mission Ashrama,
Account No. : 50200081665283
Bank Name : HDFC BANK LTD. Morabadi,
IFSC CODE : HDFC0007443

सहयोग राशि के साथ अपना ईमेल, पैन नं., मोबाईल नं., पूरा पता एवं उद्देश्य हमारे ईमेल **ranchi.morabadi@rkmm.org** या मोबाईल नं. 9835158705 पर भेजें ।

प्रभु की सेवा में आपका
स्वामी भवेशानन्द
सचिव

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर'!

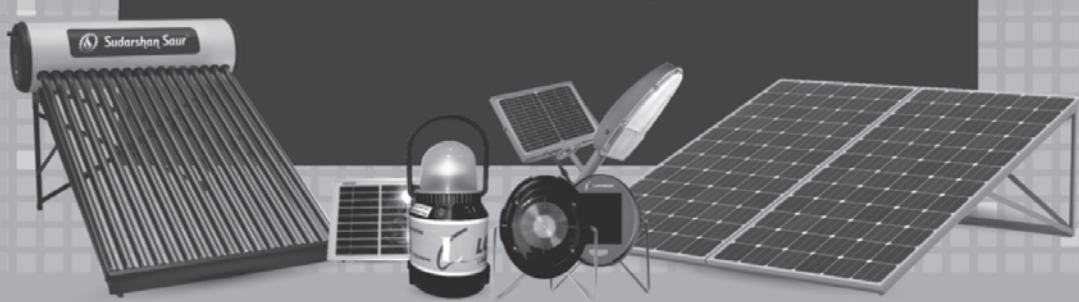

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखां संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com | Toll Free 1800 233 4545 | E-mail: office@sudarshansaur.com

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६३ **अप्रैल २०२५** **अंक ४**

श्रीरामचन्द्रध्यानम्

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे।।
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ।।

– प्रलयकालीन मेघसदृश मनोहर कान्तियुक्त, वीरासन में आसीन, ज्ञानमयमुद्राधारी, आजानु करकमलोंवाले, पार्श्वस्थिता कमलतुल्य हाथोंवाली एवं विद्युतसम कान्तिवाली सीता की ओर दृष्टिपात करते हुए तथा मुकुट, बाहुभूषणादि अनेक अलंकारों से जिनका सम्पूर्ण देह उद्भासित हो रहा है, उन राघव की मैं स्तुति करता हूँ।

कल्याणस्वरूप, जगत्कर्ता, रघुकुलस्वामी, जगन्नाथ, सीतापति तथा चन्द्र के समान आह्लाददायक श्रीराम को मैं नमस्कार करता हूँ।

पुरखों की थाती

सत्यं माता पिता ज्ञानं धर्मो भ्राता दया सखा।
शान्तिः पत्नी क्षमा पुत्रः षडेते मम बान्धवाः।। ८६३।।

– सत्य मेरी माता हैं, ज्ञान मेरे पिता हैं, धर्म मेरा भाई है, दया मेरा मित्र है, शान्ति मेरी पत्नी है तथा क्षमा मेरा पुत्र है – ये छह ही मेरे सच्चे सगे-सम्बन्धी हैं।

सन्तः कुर्वन्ति यत्नेन धर्मस्यार्थे धनार्जनम्।
धर्माचार-विहीनानां द्रविणं मलसंचयः।।८६४ ।।
(धम्मपदम्)

– सज्जन लोग धर्म के लिए प्रयत्नपूर्वक धन अर्जित करते हैं। (दूसरी ओर) अधर्म का आचरण करनेवालों का धन संचय मल संग्रह करने के समान है।

सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः।।८६५।।

– सर्वनाश की अवस्था उत्पन्न होने पर बुद्धिमान् व्यक्ति आधे को त्याग देता है और बाकी आधे से काम चला लेता है, क्योंकि सर्वनाश तो असह्य पीड़ा देता है।

भक्ति प्राप्त करने का एक उपाय है, ईश्वर का बारम्बार नाम-जप : विवेकानन्द

भगवान के प्रति उत्कट प्रेम ही भक्ति है। जब मनुष्य इसे प्राप्त कर लेता है, तो सभी उसके प्रेम-पात्र बन जाते हैं। वह किसी से घृणा नहीं करता, वह सदा के लिए सन्तुष्ट हो जाता है। इस प्रेम से किसी काम्य वस्तु की प्राप्ति नहीं हो सकती, क्योंकि जब तक सांसारिक वासनाएँ घर किये रहती हैं, तब तक इस प्रेम का उदय नहीं होता।

भक्ति कर्म से श्रेष्ठ है और योग से भी उच्च है, क्योंकि इन सबका एक न एक लक्ष्य है ही, पर भक्ति स्वयं ही अपना फलस्वरूप तथा साध्य और साधनस्वरूप है। (४/४)

भक्तियोग का एक बड़ा लाभ यह है कि वह हमारे महान दिव्य लक्ष्य की प्राप्ति का सबसे सरल और स्वाभाविक मार्ग है। पर साथ ही उससे एक विशेष आशंका यह है कि वह अपनी निम्न अवस्था में मनुष्य को बहुधा भयानक मतान्ध और कट्टर बना देता है। हिन्दू, इस्लाम या ईसाई धर्म में जहाँ कहीं इस प्रकार के धर्मान्ध व्यक्तियों का दल है, वह सदैव ऐसे ही निम्न श्रेणी के भक्तों द्वारा गठित हुआ है। (४/५)

भक्ति तो तुम्हारे भीतर ही है केवल उसके ऊपर काम-कांचन का एक आवरण-सा पड़ा हुआ है। उसको हटाते ही भीतर की वह भक्ति स्वयमेव प्रकट हो जायगी। (१०/३७१)

भक्ति प्राप्त करने का एक उपाय है, ईश्वर का बारम्बार नाम-जप। मंत्रों का केवल शब्दोच्चारण का प्रभाव होता है।

भक्ति प्राप्त करने के लिए ऐसे पवित्र मनुष्यों की संगति खोजो, जिनमें भक्ति हो और गीता तथा 'ईसानुसरण'– जैसी पुस्तकें पढ़ो। सदैव ईश्वर के गुणों के विषय में विचार करो। (१/३०)

ईश्वर के सम्बन्ध में केवल नानाविध मत-मतान्तरों की आलोचना करने से काम नहीं चलेगा। ईश्वर से प्रेम करना होगा और साधना करनी होगी। संसार और सांसारिक विषयों का त्याग विशेषतः तब करो जब 'पौधा' सुकुमार रहता है। दिन-रात ईश्वर का चिन्तन करो, जहाँ तक हो सके, दूसरे विषयों का चिन्तन छोड़ दो। सभी आवश्यक दैनन्दिन विचारों का चिन्तन ईश्वर के माध्यम से किया जा सकता है। ईश्वर को अर्पित करके खाओ, उसको अर्पित करके पिओ, उसको अर्पित करके सोओ, सबमें उसी को

देखो, दूसरों से उसकी चर्चा करो, यह सबसे अधिक उपयोगी है। (७/१५)

भगवान् की कृपा अथवा उनकी योग्यतम सन्तान महापुरुषों की कृपा प्राप्त कर लो। ये ही दो भगवत्प्राप्ति के प्रधान उपाय हैं। ऐसे महापुरुषों का संग-लाभ होना बहुत ही कठिन है, पाँच मिनट भी उनका ठीक-ठीक संग लाभ हो जाय तो सारा जीवन ही बदल जाता है। यदि तुम इन महापुरुषों की संगति के सचमुच इच्छुक हो तो तुम्हें किसी न किसी महापुरुष का संग-लाभ अवश्य होगा। ये भक्त, ये महापुरुष जहाँ रहते हैं, वह स्थान पवित्र हो जाता है, 'प्रभु की सन्तानों का ऐसा ही माहात्म्य है।'' वे स्वयं प्रभु हैं, वे जो कहते हैं, वही शास्त्र हो जाता है। ऐसा है उनका माहात्म्य! वे जिस स्थान पर निवास करते हैं, वह उनके देहनिःसृत पवित्र शक्ति-स्पन्दन से परिपूर्ण हो जाता है, जो कोई उस स्थान पर जाता है, वही उस स्पन्दन का अनुभव करता है और इसी कारण उसके भीतर भी पवित्र बनने की प्रवृत्ति जग उठती है। (७/१६)

भक्तियोग कुछ छोड़ने-छाड़ने की शिक्षा नहीं देता; वह केवल कहता है, 'परमेश्वर में आसक्त होओ।' और जो परमेश्वर के प्रेम में उन्मत्त हो गया है, उसकी स्वभावतः निम्न विषयों में कोई प्रवृत्ति नहीं रह सकती। (४/४८)

सम्पादकीय

अशरण-शरण श्रीराम

जब व्यक्ति पुरुषार्थ कर थक जाता है। जब संसार के समस्त सहायता के द्वार बन्द हो जाते हैं। जब कहीं से कोई सहायता की किरण दृष्टिगोचर नहीं होती, जब गला फाड़कर चिल्लाने पर भी कहीं कोई भी व्यक्ति सहयोग हेतु नहीं दिखता, जब व्यक्ति सभी उद्यम कर चारों ओर से हताश-निराश हो जाता है और इस संसार में असहाय होकर द्रौपदी की तरह हाथ उठाकर भगवान के शरणागत होकर 'दुख हरो द्वारिकानाथ शरण मैं तेरी' कहकर उन्हें पुकारता है, तब भगवान उस शरणागत की रक्षा के लिये दौड़कर आ जाते हैं और उसकी लाज बचाते हैं। गोस्वामीजी कहते हैं कि घनघोर यम-यातना रूपी नदी में जहाँ हिंसक काम-क्रोधादि जीव-जन्तु हैं, वहाँ भी अकारण करुणावरुणालय भगवान अपनी लम्बी भुजायें फैलाकर भक्त का त्राण करते हैं – **तहाँ बिनु कारण रामकृपालु बिसाल भुजा गहि काढ़ लेवैया।**

जब अर्जुन रण-भूमि में भ्रमित और मोहग्रस्त हो जाता है, अपने ही आचार्य, अवतार, प्राणियों के सुहृद भगवान से कुतर्क कर थक जाता है, किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है और कर्तव्य-मार्ग के निर्देशन हेतु – **'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्'** कहकर शरणागत होता है, तब भगवान अपनी कृपा-वाणी से संशय और मोह का नाश करते हैं और अन्त में अपने विराट स्वरूप का दर्शन कराते हैं और उसका सारथी बन सदा मार्गदर्शन करते हैं।

भगवान ने सदा अपने शरणागतों की रक्षा की है। जब जयन्त त्राहि-त्राहि कहकर शरणागत हो गया, तब भगवान ने उसे जीवन-दान दे दिया।

जब ग्राह ने अर्धरात्रि में गजराज को पकड़ लिया और गजराज जोर-जोर से चिघाड़ने लगा, कहीं से उस विषम काल में कोई सहायता नहीं मिली, तो उसने भगवान को पुकारा और भगवान ने आकर उसकी रक्षा की।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि भगवान राम की शरण में जाने से किसका कल्याण नहीं होता है, सबका कल्याण होता है। अपनी प्रसिद्ध रचना गीतावली में गोस्वामीजी लिखते हैं –

गये राम सरन सबकौ भलौ।
धनी-गरीब, बड़ो-छोटो, बुध-मूढ़, हीनबल-अतिबलो। १।
पंगु-अंध, निरगुनी-निसंबल, जो न लहै जाचे जलो।
सो निबह्यो नीके, जो जनमि जग राम-राजमारग चलो।।[१]

– ''राम की शरण जाने से सबका भला होता है। चाहे वह धनी हो या निर्धन, बड़ा हो या छोटा, बुद्धिमान हो या मूर्ख अथवा दुर्बल हो या अति बलवान। जो पंगु, अन्धे, गुणहीन और अकिंचन हैं, जिन्हें माँगने पर जल तक नहीं मिलता, उन्होंने भी यदि संसार में जन्म लेकर राम के राजमार्ग (भक्तियोग) का अवलम्बन किया है, तो प्रभु ने उनको खूब निभाया है।''

इसका ज्वलन्त दृष्टान्त हम भगवान श्रीराम के जीवन में देखते हैं। जब विभीषण भगवान राम के पास पहुँचकर उनके शरणागत होकर प्रार्थना करते हैं। उसका बड़ा ही मार्मिक चित्रण तुलसीदासजी ने किया है –

सुजस सुनि श्रवन हौं ! नाथ आयो सरन।
उपल-केवट-गीध-सबरी-संसृति-समन,
सोक-श्रम-सीव सुग्रीव आरतिहरन।।१।।
पतितपावन ! प्रणतापाल ! करुणासिन्धु !
राखिये मोहि सौमित्रि-सेवित-चरन।।३।।[२]

विभीषण कहते हैं – प्रभो ! मैं आपका सुयश अपने कानों से सुनकर आपकी शरण में आया हूँ। आप पाषाणरूपिणी अहल्या, केवट, गीध और शबरी के आवागमनरूप संसृतिचक्र को शान्त करनेवाले तथा शोक और श्रम के सीमारूप सुग्रीव का दुख दूर करनेवाले हैं। हे पतितपावन ! हे प्रणतपाल ! हे करुणासिन्धो ! आप हमें लक्ष्मणजी द्वारा सेवित अपने चरणों में आश्रय दीजिये। हे नाथ ! **आरत-बंधु, कृपालु, मृदुल-चित जानि सरन हौं आयो** – हे नाथ! मैं आपको दीनबन्धु, कृपालु और मृदुलचित्त जानकर ही शरण में आया हूँ।

भगवान के शरण जाने से क्या होता है?

जब भक्त निश्छल होकर तन-मन-वाणी से पूर्णतः भगवान की शरण में चला जाता है, तब? सरन गये प्रभु राखिहैं सब अपराध बिसारि। भगवान उसके सभी अपराधों

को भुलाकर उसे शरण में लेकर उसका सब दुख दूर कर देते हैं। जब विभीषण ने उपरोक्त प्रार्थना के साथ भगवान राम की शरण ली, तो भगवान ने क्या किया? गोस्वामीजी लिखते हैं –

दीनता-प्रीति-संकलित मृदुबचन सुनि
पुलकि तन प्रेम, जल नयन लागे भरन।
बोलि लंकेस' कहि अंक भरि भेंटि प्रभु,
तिलक दियो दीन-दुख दोष दारित दरन।।[३]

– विभीषण की दीन और प्रेममय मधुर वाणी सुनकर श्रीराम का शरीर प्रेम से पुलकित हो गया और आँखों में आँसू भर गये। तब दीनों के दुख, दोष और दरिद्रता दूर करनेवाले प्रभु ने उन्हें 'लंकेश' कहकर सम्बोधित किया और भुजाओं में भरकर आलिंगन कर उनका राजतिलक कर दिया। इसलिये भक्त को भगवान के शरणागत होने का प्रयत्न करना चाहिये और प्रार्थना करनी चाहिये –

हे प्रभो! मेरी प्रारब्ध-कर्म-राशि भले ही मुझे आपके चरणों में पहुँचने में, सत्पथ पर चलने में बाधक बने, मेरे कुसंस्कार भले ही मुझे आपसे विच्युत करने का प्रयास करें, किन्तु मैं सदा आपको ही चाहता हूँ और नित्य यथाशक्ति आपकी ओर अग्रसर होने का प्रयास करता रहूँगा। हे नाथ! मेरा अहंकार भले ही आपसे विमुख करने का प्रयत्न करे, मेरी बुद्धि भले ही मुझे भ्रमित करने की कुचेष्टा करे, मेरा चंचल मन भले ही आपके नाम-रूप-गुण-लीला में एकाग्र न होता हो, लेकिन मेरा हृदय-सिंहासन सदा ही आपके विराजमान होने की प्रतीक्षा करता रहेगा। हे स्वामी! मैं जब भी आँखें बन्द करूँ, तो भले ही मन-मस्तिष्क और हृदय प्रदेश में तमसाच्छन्न मेघ दृष्टिगोचर हों, किन्तु उसमें बिजली सम कौंधकर आपके दिव्य ज्योर्तिमय दर्शन की हमें आन्तरिक अभिलाषा रहेगी। यदि आप अपने कृपा-कटाक्ष से मेरे उर-तमान्ध का नाश कर भव्य प्रकाशमय रूप में अपना दिव्य दर्शन देंगे, तो मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

हे प्रभो! नाम यश की प्रबलाकांक्षा, आपसे मुझे पृथक् करती रहती है, पद-प्रतिष्ठा की घोर लिप्सा, अभीप्सा आपके सत्यस्वरूप में मुझे प्रतिष्ठित नहीं होने देती, काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह मुझे सतत आपसे दूर खींचकर अधोगामी करने का प्रयास करते रहते हैं, किन्तु आपने कृपा कर मुझे अपने चरणों से बाँधकर रखा है, इसका मुझे सतत बोध होता रहे और कभी भी किसी भी परिस्थिति में मैं आपकी कृपा और पद-धूलि से वंचित न होऊँ, ऐसी आपकी कृपा की सदा मुझे अभीप्सा रहेगी।

हे प्रभो, आप जगन्नियन्ता जगदाधार हैं, आप पापियों को दण्ड देनेवाले और उनके नाशक हैं, किन्तु मेरे लिये आप तो दयामय पिता बनकर आइयेगा। जैसे एक पिता अपने पुत्र को दोषों से सप्रेम परिमार्जित कर उसे प्रक्षालित कर अपनी गोद में उठा लेता है, वैसे ही आप मुझे परिष्कृत कर अपने अंक में ले लेगें, तो मेरा जीवन धन्य हो जायेगा।

हे प्रभो, आपने गरुड़जी का संशय कागभुसुंडीजी के द्वारा सप्रेम सम्मानपूर्वक दूर कराया था, वैसे ही आप मेरे संशय-भ्रम को दूर करने की कृपा करें, मैं शरणागत हूँ।

हे प्रभु! आपने जड़मति शिला रूप अहिल्या का उद्धार कृपा कर निज चरण-कमल से स्पर्श कर किया था। हे प्रभु, मेरी बुद्धि भी जन्म-जन्मान्तरों से जड़वत् है, आप कृपा कर बिना प्रतीक्षा किये सत्वर मेरी बुद्धि की जड़ता का नाश कर स्वचरणानुरागी बना लेंगे, ऐसी मेरी हार्दिक अभिलाषा है। हे प्रभो, विभीषण सदृश मैं भी अनीश्वरवादियों, नास्तिकों और हृदयस्थ प्रबल इन्द्रियों की बर्बरता से त्रस्त हूँ, आप कृपा कर मुझे इस दुष्चक्रव्यूह से निकालकर विभीषण जैसे अपने चरणों में शरण देंगे, ऐसी मेरी प्रबल इच्छा है। मुझे ऐसे ही राम की शरण चाहिए!

हे प्रभु! आपने अनाथ भयभीत अंगद को निर्भयता प्रदान की। हे प्रभो, आपने निर्वासित विषयी सुग्रीव को अपना सखा बनाकर उन्हें अपना सान्निध्य प्रदान किया। जब मेरी प्रबल इन्द्रियाँ आपसे एकाकार होने में बाधा दें, तब आप कृपा कर मेरे हृदय-कमलासन में प्रकाशित होकर अपना प्रकाशमय रूप और स्वरूप का सान्निध्य प्रदान करेंगे, ऐसी मेरी आकांक्षा है। मैं ऐसे ही राम के शरणागत हूँ!

हे राम! जिस प्रकार हनुमानजी आपके अत्यन्त सन्निकट रहते हैं, आप वैसे ही मुझे अपना सान्निध्य प्रदान करेंगे, और समस्त हनुमत्-गुणों से मुझे भूषित कर अपने चरणों में शरण देंगे, ऐसी मेरी आन्तरिक अभिलाषा है। प्रभो! मैं शरणागत हूँ। आपके पतित-पावन चरणों में शरण-ग्रहण करता हूँ। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – **१.** गीतावली, ५/पद ४२/१-२ **२.** वही, ५/पद ४३/१,३ **३.** वही, ५/पद ४३/४

रामनवमी विशेष

श्रीरामकृष्ण के रामलला

स्वामी उरुक्रमानन्द

रामकृष्ण मिशन साधना कुटीर, ओंकारेश्वर, (मध्य प्रदेश)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सर्वविदित है कि भगवान श्रीरामचन्द्र जी को चौदह वर्षों का वनवास हुआ था और उसे पूरा करने के पश्चात् वे अयोध्या में पुन: लौट आए थे। परन्तु हमारे रामलला को तो मानो लगभग पाँच सौ वर्षों का वनवास मिला था। आज पूरा देश इतनी सुदीर्घ प्रतीक्षा के बाद अपने आराध्य की अयोध्या में पुन: विधिपूर्वक प्रतिष्ठा होने

से भावविभोर है एवं हमारे देश में मानो एक अभूतपूर्व अध्यात्ममय वातावरण की सृष्टि हुई, जिसे सारा हिन्दू समाज अपने हृदय में अनुभव कर रहा है। हर एक रामभक्त के मन में एक बार अपने आराध्य को अयोध्या में जाकर देख आने की तीव्र इच्छा हो रही है। आज लाखों की संख्या में रामभक्त अयोध्या जा रहे हैं। ऐसा भला क्यों हो रहा है?

शास्त्रों का अनुमोदन : भगवान श्रीराम भारतवासियों के ही नहीं मानवमात्र के आदर्श हैं। श्रीराम को परब्रह्म का अवतार माना गया है, जो मर्यादाओं की रक्षा के लिए अवतरित हुए। सदाचार-संस्थापन और धर्म-रक्षण ही उनका मुख्य उद्देश्य था। वास्तव में श्रीराम का जीवन ही भारतीय संस्कृति का दर्पण है। इसी कारण भगवान श्रीराम की कथा का प्रचार-प्रसार और विस्तार भारतीय जनमानस में सर्वतोभाव से होता रहा है। उनके जीवन चरित्र की घटनाएँ, लीलास्थान, लक्षण और उनके चिह्न, जिनका वर्णन शास्त्रों में मिलता है, वे आज भी उपलब्ध हैं। इसीलिए भगवान श्रीराम का अवतार, उनकी लीलाएँ और उनकी कथाएँ कपोल-कल्पित नहीं, बल्कि वास्तविक हैं। श्रीराम भारतीय संस्कृति एवं भारतीय जनमानस की सर्वाधिक श्रद्धा के आधार हैं और भारतवासियों के जीवन हैं।

श्रीरामकृष्ण के जीवन में रामलला : श्रीरामकृष्ण देव के जीवन में रामलला को लेकर एक विशेष घटना हुई थी। जब वे अपने साधनाकाल में एवं परवर्ती काल में गंगा के किनारे स्थित दक्षिणेश्वर मन्दिर में निवास करते थे, तब अनेक प्रकार के साधु-संन्यासी वहाँ आया करते थे, क्योंकि वहाँ निवास और भोजन-पानी की सुव्यवस्था थी। 'रामलला' का अर्थ उत्तर भारत में बालकवेशधारी श्रीरामचन्द्र जी को ही लेकर आता है। एक बार ऐसे ही भ्रमण करते हुए एक बाबाजी (साधु) दक्षिणेश्वर आए, जो रामलला की छोटी-सी मूर्ति की उपासना किया करते थे। उन साधु के लिए वह धातु की मूर्ति मानो जीवन्त थी। वे जो कुछ भी भिक्षा करके ले आते थे, उसे ही बनाकर 'रामलला' को भोग लगाते थे। इतना ही नहीं, रामलला सचमुच भोजन कर रहा है या कोई वस्तु खाने के लिए माँग रहा है, टहलने जाना चाहता है, प्रेमपूर्वक हठ कर रहा है, इत्यादि उन्हें प्रत्यक्ष दिखाई देता था। वे साधु उसी मूर्ति को लेकर सदा आनन्द-विह्वल तथा मस्त रहते थे। श्रीरामकृष्ण कहते थे कि उन्हें भी रामलला की लीलाएँ दिखाई देती थीं और वे भी हमेशा उन साधु के पास बैठे-बैठे रामलला को देखा करते थे।

श्रीरामकृष्ण ने स्वयं कहा था कि ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, त्यों-त्यों रामलला का भी मेरे प्रति प्रेम बढ़ने लगा। वे कहते थे कि जब तक बाबाजी के पास बैठा रहता था, तब तक रामलला वहाँ पर प्रसन्न रहा करता था, खेलता रहता था, पर ज्योंही श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में चले जाते, उस समय वह रामलला भी उनके साथ चला आता था। उनके मना करने पर भी रामलला उन साधु के पास नहीं ठहरता था। पहले-पहल श्रीरामकृष्ण यह समझते थे कि वे अपनी धुन में ही इस तरह का अनुभव कर ऐसा देखा करते हैं। अन्यथा जो साधु उस जाग्रत विग्रह की इतनी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सेवा कर रहे हैं, उस साधु की अपेक्षा उनसे उस रामलला का

प्रेम होना क्या कभी सम्भव हो सकता है? किन्तु उनकी इस धारणा का भला मूल्य ही क्या था? वे सचमुच देखा करते थे कि वह प्रत्यक्ष रूप से उनके साथ-साथ चलता था, नाचता था और आगे-पीछे दौड़ा करता था। कभी गोद में चढ़ने की ही हठ करता था।

यदि वे अपनी गोद में ले लेते, तो किसी भी तरह गोद में नहीं रहना चाहता। नीचे उतरकर धूप में दौड़ा करता, काँटेदार झाड़ियों में जाकर फूल तोड़ता या गंगाजी में उतरकर उछल-कूद मचाता था। श्रीरामकृष्ण उसे मना करते, परन्तु वह तो बिल्कुल भी उनकी बातों पर ध्यान नहीं देता था। वह अपनी सुन्दर कमल के समान आँखों से उन्हें देखता और मुस्कुराता था और पुनः मस्ती शुरू कर देता था। अथवा दोनों ओठों को फुलाकर मुँह बनाकर उनके साथ उपहास करने लगता था। तब क्रोधित होकर श्रीरामकृष्ण उसे जबरदस्ती पकड़कर पानी से या धूप में से अपने कमरे में बन्द करके वहीं खेलने के लिये कहा करते थे। कभी-कभी तो जब वह अधिक उधम मचाता तो श्रीरामकृष्ण उसे थप्पड़ भी लगा दिया करते थे। मार खाकर वह अपने सुन्दर ओठों को फुलाकर सजल नेत्रों से उनकी ओर देखते रहता था। उस समय उनके मन में कष्ट होता और वे रामलला को गोद में लेकर स्नेहपूर्वक शान्त किया करते थे। श्रीरामकृष्ण कहते थे कि वे ठीक-ठीक ऐसा ही देखा करते थे और उसके साथ ऐसे ही आचरण भी किया करते थे। एक बार श्रीरामकृष्ण गंगा स्नान के लिए जा रहे थे और रामलला ने भी हठ पकड़ ली कि वह भी उनके साथ जाएगा। इसीलिए उन्हें उसे गंगा में ले जाना पड़ा। फिर क्या था? वह किसी भी तरह से गंगा से निकलने को तैयार न था। इस पर अत्यन्त क्रोधित होकर उन्होंने उसका सिर गंगा के जल में डुबो दिया और कहा, 'ले, जल में जितना रहना चाहे रह।' तब उन्होंने देखा कि वह सचमुच जल में हाँफ उठा था और उसका शरीर सिहर उठा है। उस समय उसके कष्ट को देखकर श्रीरामकृष्ण ने सोचा, 'यह मैंने क्या किया' और उन्होंने उसे जल से निकालकर गोद में ले लिया।

एक दिन तो उसने इतनी हठ कर दी कि उन्होंने उसके चित्त को दूसरी ओर आकृष्ट करने के उद्देश्य से उसे धान समेत चार खीलें खाने को दे दीं। धान के छिलकों से उसकी कोमल नरम जीभ छिल गयी। यह देखकर उन्हें बहुत ही कष्ट हुआ और वे रोने लगे तथा उसकी ठोड़ी पकड़कर कहने लगे, 'माता कौसल्या जिस मुहँ में यह सोचकर कि कहीं लग न जाए, खीर, मलाई, नवनीत आदि भी अत्यन्त सावधानी के साथ खिलाया करती थीं, मैं इतना अभागा हूँ कि उस मुँह में ऐसी तुच्छ वस्तु देते मेरे मन में थोड़ा-सा भी संकोच नहीं हुआ। ये बातें श्रीरामकृष्ण अपने त्यागी शिष्यों से कह रहे थे, तब भी उनका पहले वाला शोक मानो पुनः जाग्रत हो गया और वे व्याकुलता के साथ रोने लगे। उनके शिष्यों को रामलला के साथ उनके सम्बन्ध की बातों को तनिक भी हृदयंगम करना सम्भव न होने पर भी तब उनकी आँखें डबडबा आई थीं।

उनके शिष्य उत्कण्ठा के साथ उस रामलला की मूर्ति को देखने लगे, जिसमें उन्हें भी कुछ दृष्टिगोचर हो सके। पर उन्हें तो कुछ भी दिखलाई नहीं दिया और दीखने ही क्यों लगा? रामलला के प्रति उनका वह प्रेमाकर्षण ही कहाँ था? श्रीरामकृष्ण देव की तरह उनके हृदय में श्रीरामचन्द्र जी का भाव घनीभूत होकर उनके भाव-नेत्र कहाँ खुले थे, जिससे वे बाहर भी जीते-जागते रामलला का दर्शन कर सकें? वे तो उसे एक छोटे खिलौने के रूप में ही देखते थे और यह सोचा करते थे कि श्रीरामकृष्ण देव जो कुछ कहते हैं, क्या ऐसा हो सकता है अथवा उसका होना क्या सम्भव है? सांसारिक विषयों में हमारी भी यही दशा है। अविश्वास का बोझ लेकर हम बैठे हुए हैं। देखो न, ब्रह्मज्ञ ऋषि ने कहा, **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन'** – संसार में एक सच्चिदानन्द ब्रह्म वस्तु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, इसे सोचकर हम सोचते हैं सम्भवतः 'यह ठीक ही होगा', संसार की ओर हमने आँखे उठाकर देखा, किन्तु ढूँढ़ने पर भी हमें एकमेवाद्वितीयम् ब्रह्मवस्तु का कुछ भी पता नहीं चला। केवल लकड़ी, मिट्टी, घर-द्वार, मनुष्य, गाय तथा नाना प्रकार की वस्तुएँ ही दिखलाई देती हैं। हमें वह अलौकिक रामलला की क्रीड़ा कभी दिखलाई ही नहीं

शेष भाग पृष्ठ १५६ पर

रामनवमी विशेष

राम नवमी

स्वामी मैथिलीशरण

अध्यक्ष, रामकिंकर विचार मिशन, ऋषिकेश

प्रति वर्ष राम-जन्मोत्सव करने का तात्पर्य है – राम को वर्तमान में बनाये रखना। हम केवल राम के जन्मोत्सव को साधारण सांसारिक रूप में गिनती गिनकर ही नहीं मनाते हैं, अपितु यह भावना करते हैं कि राम का जन्म अभी हुआ है। इस उपलक्ष्य में बधाइयाँ गाते हैं, बालक रूप में उन्हें झूला झुलाते हैं, यह है भूतकाल को वर्तमान करने की विधि। यह केवल ईश्वर में ही सामर्थ्य है, जो हर काल के लोगों को अपनी मधुर लीलाओं के द्वारा सुख दे सके, जो रो भी सके, जो हँस भी सके, छोटा भी हो जाये, एक पग में पूरा ब्रह्माण्ड नाप ले, परन्तु गंगा पार करने के लिए नाव माँगे। जो संकल्प से रावण को मार सकता हो, वह विभीषण से रावण के विनाश का उपाय पूछे। सब कुछ जानते हुए भी जो बन्दरों के प्रयास को धन्य करने के लिए दसों दिशाओं में सीताजी की खोज के लिए सेना भेजे, जो विज्ञ होकर भी अविज्ञ बनकर जड़ पदार्थों से सीताजी का पता पूछे, वे ही परिपूर्ण राम हैं, जो सकल-विरुद्ध-धर्माश्रय हैं।

जो वन में भी सुखी रहे, राज्य बनाकर राजा के आदर्शों का पालन करते हुए प्रेम के स्वरूप की स्थापना करे। जो भूत भी है, वर्तमान भी है और भविष्य है, वही तो वर्तमान राम है। वर्तमान का सदुपयोग ही हमारी आस्तिकता है, वही राम की पूजा है।

भगवान ने जन्म लेकर पहले माताओं को सुख दिया, फिर दशरथजी को परमानन्द और ब्रह्मानन्द की अनुभूति हुई। ब्रह्मानन्द ज्ञान विषयक है और परमानन्द भक्ति विषयक है। गोस्वामीजी ने दोनों को जोड़कर यह सिद्ध करना चाहा कि ज्ञानी और भक्त दोनों को आनन्द की आवश्यकता है और केवल राम ही ऐसे हैं, जो दोनों को परिपूर्ण आनन्द दे सकते हैं।

दशरथजी ने अपने आनन्द का विस्तार किया और सारी अयोध्या को सूचना दे दी, नगर में घर-घर बधावे बजने लगे –

गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुषमा कंद।
हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि नर बृंद।। १/१९४/०

अब यह सुख व्यक्ति से शुरू होकर प्रकृति तक चला गया, सरयूजी का जल बढ़ने लगा, उसमें और अधिक पवित्रता आने लगी। वृक्षों में फल आ गये, सरोवर भर गये, न अधिक धूप, न अधिक शीत, ऋतु वातानुकूलित हो गई, यह है राम का स्व-स्वरूप, जो कौशल्या रूपी पूर्व दिशा से उदित होकर सारे संसार को प्रकाशित करने वाला हो गया।

श्रीराम के जन्म से जो संसार को सुख मिला, उस सुख का वर्णन कर पाने में स्वयं सरस्वतीजी और शेष भगवान भी अपने को असमर्थ पाते हैं।

अयोध्या में एक महीने तक रात्रि ही नहीं हुई, क्योंकि सारी तिथियाँ दुखी हो गईं कि नौमी (नवमी) में भगवान आये। हम लोग बस लौकिक कारणों से ही माने जायेंगे, परन्तु भगवान का जन्म तो नौमी को ही हुआ। तो जब एक महीने तक रात्रि ही नहीं हुई, काल की गति अवरुद्ध हो गई, तो एक माह में सारी तिथियाँ आ गईं, सब प्रसन्न।

शुक्ल पक्ष ने कहा कि भगवान ने मेरा पक्ष लिया, मुझमें जन्म लिया। कृष्ण पक्ष को लगा कि मैं अभागा रह गया, तो भगवान ने कहा तुम चिन्ता मत करो, द्वापर युग में जब मैं कृष्णावतार लूँगा, तब मैं कृष्ण पक्ष में अवतरित हो जाऊँगा, परन्तु तुम्हारे सुख के लिए मैं अभी भी दिन में ही रात्रि कर देता हूँ, तब अयोध्या के नगर-वासियों ने इतनी मात्रा में रंग-गुलाल उड़ाया कि पृथ्वी पर सूर्य का प्रकाश ही आना बन्द हो गया –

अगर धूप बहु जनु अँधिआरी। उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी।
अवधपुरी सोहइ एहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती।।
१/१९४/३,५

भगवान के जन्म में तो अँधेरा भी आनन्द का ही कारक होता है। अयोध्या ऐसी शोभायमान हो रही है, जैसे रात्रि ही

स्वयं भगवान से मिलने आ गई हो। तुलसीदासजी को लगा कि इस आनन्द में मैं कैसे सम्मिलित हो जाऊँ? तो उन्होंने देखा कि दशरथजी के चारों पुत्रों को लोग आशीर्वाद दे रहे हैं, तो मैं भी भीड़ में सम्मिलित हो जाऊँ, तब तुलसीदासजी कहने लगे – अयोध्या में जिनका जन्म हुआ है, ये हमारे ईश्वर श्रीराम जी हैं। भगवान से निजत्व का नाता जोड़ लेना, यही तुलसीदासजी का अभीष्ट है। तब उन्होंने लिखा –

मन संतोषे सबन्हि के जहँ तहँ देहिं असीस।
सकल तनय चिर जीवहुँ तुलसिदास के ईस।।१/१९६/०

तुलसीदासजी ने सोचा अभी ये नन्हे से हैं, माता कौशल्या की गोद में समा गये हैं, तो इसी समय से इनसे नाता जोड़ लेना ठीक रहेगा, ताकि जब ये व्यापक हो जायेंगे, सर्वत्र हो जायेंगे, तो उनके साथ हमारी व्यापकता का विस्तार भी सहज ही हो जायेगा। एक साथ सबको सन्तुष्ट कर देना ही राम की व्यापकता है।

गंगा का मूल गोमुख, सूर्योदय की पूर्व दिशा, धान्य का बीज, ये हमारी संस्कृति में मूल और सूत्र हैं, जो अखण्ड हैं, व्यापक हैं और राम की तरह सर्वत्र हैं – **१/१८४/५**

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

फिर गुरु वशिष्ठजी ने कहा कि इन चारों पुत्रों को विश्व-कल्याण से जोड़ देते हैं और तब उन्होंने राम को आनन्द, सुख और विश्राम से जोड़ा, जो प्राणी मात्र का अभीष्ट है। सारे संसार का लालन-पालन भी करना है, तो श्रीभरत को भरण-पोषण से जोड़ दिया। संसार में सब प्रेम से रहें, किसी को किसी से राग-द्वेष, ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा न हो, तो इन गुणों से युक्त शत्रुघ्न जी को जोड़ दिया, जिनके स्मरण मात्र से शत्रुओं का नाश हो जाता है।

सारे संसार को आधार चाहिए, चरित्र चाहिए, जिसको राम की प्रियता सहज प्राप्त है, निश्चित रूप से ईश्वर का वास्तविक रूप तो प्रेम ही है, उसी को जिसने प्राप्त कर लिया हो, ऐसे हैं श्रीलक्ष्मण। प्रेम और उदारता तो सबको चाहिए, तो वशिष्ठजी ने कहा, इनका नाम लक्ष्मण होगा, सारे संसार का भार तो वही उठा सकता है, जो श्रीराम को ही अपना आधार मानता हो।

जो आनंद सिंधु सुखरासी।सीकर तें त्रैलोक सुपासी।
सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक बिश्रामा।
बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।।
जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा।
१/१९६/५-८

लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार।
गुरु बसिष्ट तेहि राखा लक्षिमन नाम उदार।। १/१९७/०

❍❍❍

पृष्ठ १५४ का शेष भाग

देती। यदि पुरातन ऋषिगण आकर हमसे कहें, नहीं भाई, यह बात नहीं है, देह-मन-वाणी से संयम तथा पवित्रता का अभ्यास कर तुम एकाग्रचित बनो, अपने चित्त की चंचलता को दूर करो, तभी हमने जो कुछ कहा है, उसे तुम समझने तथा देखने में समर्थ होंगे, यह संसार ही तुम्हारे हृदयस्थ भावों का घनीभूत प्रकाश है।

उपसंहार – यदि हम अपने भावों को शुद्ध रखें तथा ऋषि-वाणी पर विश्वास रखें एवं अपनी भक्ति तथा व्याकुलता से ईश्वर के चरणों में समर्पित हों, तभी हमें मृण्मयी मूर्ति में उस चिन्मयी सत्ता का आभास एवं दर्शन तक हो जाएगा। इसे ही रामलला के इस दृष्टान्त से श्रीरामकृष्ण देव ने सिद्ध कर दिखलाया है।

अयोध्या में हमारे रामलला प्रतिष्ठित हो चुके हैं। माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने २२ जनवरी, २०२४ को रामलला-मन्दिर के प्रतिष्ठा दिवस पर सत्य ही कहा था, 'अब हमारे रामलला टेण्ट में नहीं रहेंगे।'' हम बहुत पहले ही इस स्थान को पाने के अधिकारी थे। परन्तु कुटिल लोगों की कुटिलताओं ने जटिलता का निर्माण करा दिया। इसके परिणामस्वरूप अपनी ही चीज पाने से हम इतने वर्षों तक वंचित रहे। परन्तु वेदवाणी सार्थक हुई है और 'सत्यमेव जयति नानृतम्' (अथर्ववेद मुण्डकोपनिषद् ३.१.६) – सत्य जो स्वयं प्रकाशित है, उसे षडयन्त्रपूर्वक भला कब तक झुठलाया जा सकता था? सचमुच आज रामलला के लिये एक भव्य एवं दिव्य मन्दिर निर्मित हो चुका है। आओ, हम सनातन हिन्दू श्रीराम के भक्त उस मनोहर मन्दिर का दर्शन करें एवं उन रामलला की छबि को अपने मन में बसाएँ एवं अपनी भक्ति-उपासना से अपने हृदय में उन्हें चिन्मय रूप से प्रतिष्ठित कर अपने जीवन को धन्य बनाएँ। ❍❍❍

रामनवमी विशेष

लोक जीवन में श्रीराम

सीमाहरि शर्मा, अवधपुरी, भोपाल

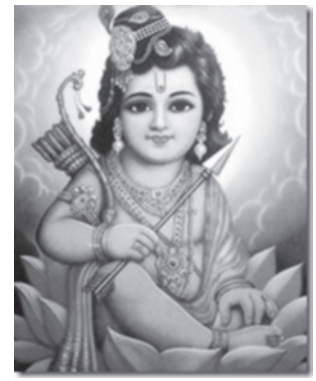

'लोक' का अर्थ ऋग्वेद में 'संसार' या 'स्थान' है। उपनिषदों में 'इहलोक' और 'परलोक' दो लोक माने गए हैं। इसी तरह आकाश लोक, पाताल लोक और भू लोक या पृथ्वी लोक की अवधारणा भी प्राचीन है। चौदह लोकों का विवरण भी शास्त्रों में मिलता है। स्वर्गलोक और नरकलोक की अवधारणा सर्वत्र जनमानस में रची-बसी है, जो बुरे कर्मों से बचाती है।

इस तरह लोक शब्द अत्यन्त प्राचीन है और 'लोक जीवन' का प्रयोग जिस अर्थ में किया जाता है, वह कोई निश्चित भूभाग, या गाँव या कबीले से है, जिसकी अपनी भाषा, कला, परम्परा, संस्कृति और पारस्परिक व्यवहार की पृथक् पहचान हो। लोक जीवन अपनी जीवन-शैली, शिल्प, नृत्य, भाषा, चिकित्सकीय ज्ञान, कृषि पद्धति, साहित्य और लोकगीतों आदि से अपनी पृथक् पहचान बनाता है। ये परम्पराएँ हमारी ऐतिहासिक धरोहर भी हैं। सारांश में कहें, तो 'लोक जीवन' से तात्पर्य है, वह जीवन जो व्यक्तिगत या स्वयं के जीवन से पृथक् सार्वजनिक हो। जहाँ सारे क्रियाकलाप सर्व के लिए हों।

राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, वे अवतारी होते हुए भी कोई चमत्कार नहीं करते। जन्म के पश्चात् पालने में माता कौशल्या को वे अपना अद्‌भुत अखंड रूप जिसमें कोटि ब्रह्माण्ड समाये हैं, दिखाते हैं। तब माता कौशल्या कहती हैं – **२/२०२/०**

बार बार कौसल्या बिनय करइ कर जोरि।
अब जनि कबहूँ व्यापै, प्रभु मोहि माया तोरि।।

यहाँ वे यह कहती हैं – **१/१९१/छ.**

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा।।

और भगवान राम तुरन्त अपना ब्रह्म स्वरूप छोड़कर रोना प्रारम्भ कर देते हैं।

राम का ब्रह्मस्वरूप तुलसीदासजी की परम भक्त की दृष्टि से रामचरितमानस में तो दिखाई देता है, परन्तु वाल्मीकि रामायण में प्रत्यक्षत: राम का नर-चरित्र ही दिखाई देता है, भले ही सूक्ष्म दृष्टि से पढ़ने पर श्रीराम का ईश्वरत्व सर्वत्र निरूपित हो। ऐसा इसलिए है, क्योंकि श्रीराम का जन्म ही लोक जीवन के कष्टों के उन्मूलन के लिये होता है। समस्त आसुरी शक्तियों के सर्वनाश के लिये होता है।

वाल्मीकि रामायण में बालकाण्ड के सत्रहवें सर्ग में जब भगवान विष्णु महामनस्वी राजा दशरथ के पुत्र-भाव को प्राप्त हो गये, तब ब्रह्माजी ने सभी देवताओं से कहा कि भगवान विष्णु की सहायता के लिए वानररूप में अपने ही समान पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करो। तभी सुग्रीव, हनुमानजी, नल आदि वानरयूथपतियों की उत्पत्ति होती है।

सर्ववानरमुख्येषु बुद्धिमान बलवानपि।
ते सृष्टा बहुसाहस्त्रा दशग्रीववधोद्धता:।।

(बालकाण्ड सत्रहवाँ सर्ग)

श्रीराम स्वयं भगवान थे। वे चाहते तो उनके लिये रावण को मारना कोई कठिन कार्य नहीं था, परन्तु वे लोक में प्रेरणा देते हैं और यह आदर्श प्रस्तुत करते हैं कि आसुरी शक्तियों से स्वयं लड़ना होगा, किसी चमत्कार की प्रतीक्षा नहीं करनी है। चमत्कारों की प्रतीक्षा व्यक्ति को अकर्मण्य न बना दे, इसलिए राम ने दण्डक वन में व्याप्त असुरों को स्वयं के पराक्रम से समाप्त किया, किसी चमत्कार से नहीं। लंका का राजा रावण स्वयं उत्पात करने, ऋषियों के यज्ञादि कार्यों में बाधा उत्पन्न करने, नरसंहार करने नहीं आता था। उसने अपने असुरों को आर्यावर्त में बैठा रखा था, जिन्होंने पूरे गाँव नरसंहार कर नष्ट कर दिए थे। वे ऋषियों की तपस्या भंग करने का प्रयास करते थे। यज्ञ की अग्नि में रक्त, मांस आदि की वर्षा कर अनुष्ठान पूर्ण होने में बाधा उत्पन्न करते थे। शायद रावण का एक अभिप्राय यह भी हो कि तप-अनुष्ठान से कोई रावण से अधिक शक्तियाँ अर्जित न कर ले।

ऋषि विश्वामित्र इन्हीं आसुरी शक्तियों को नष्ट कर शान्ति स्थापना के लिए अयोध्या नरेश राजा दशरथ से उनके पुत्र श्रीराम को माँगकर अपने साथ ले गये थे। यहीं श्रीराम-लक्ष्मण ने ताड़का और सुबाहु को मारा तथा मारीच को शत योजन दूर फेंक दिया था। बाद में मारीच को श्रीराम ने वनवास के

समय पंचवटी क्षेत्र में मारा था, जब उसने रावण के कहने पर स्वर्ण मृग का रूप धर कर माता सीता से छल किया था।

बालकाण्ड के तीसवें सर्ग में भगवान राम महर्षि विश्वामित्र के सिद्धाश्रम में अन्तिम अनुष्ठान के समय यज्ञ वेदी क्षेत्र पर रक्त और मांस की वर्षा करने पर सुबाहु और मारीच को मांस-भक्षण करनेवाले दुराचारी कहकर सम्बोधित करते हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि राम मांसाहारी नहीं थे। यह लोकजीवन की आस्था को भ्रमित करने के दुष्चक्र के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

पश्य लक्ष्मण दुवृत्तान् राक्षसान् पिशितासनान्।
मानववस्त्रसमाधुताननिलेन यथा घनान्।।

(बालकांड तीसवाँ सर्ग)

प्रभु राम ने ताटक वन की जो स्थिति देखी, तभी समस्त आर्यावर्त को असुरों से और असुर अधिपति रावण से मुक्त कराने का प्रण किया। राम ने वनवास के समय युद्ध के समय लोक प्रतिनिधियों का सहयोग लिया। रावण से इतना बड़ा युद्ध आम जन के साथ वानरों को साथ लेकर लड़ा। वे चाहते, तो अयोध्या से सेना बुलवा सकते थे।

राम ने लोक जीवन में यह संदेश दिया कि सीमित संसाधनों से भी बुराई पर विजय प्राप्त की जा सकती है। राम ने बिना भेद-भाव के हर वर्ग का सम्मान किया, निषादराज केवट और शबरी का भी। राम ने वनवास की अवधि में लोक-जीवन से जुड़े उनके जीवन को देखा-समझा, तभी राजा बनने पर श्रीराम आदर्श राम-राज्य स्थापित कर सके, ऐसा राज्य जो आज सभी का अभीष्ट है।

'बुराई से घृणा करो, बुरे व्यक्ति से नहीं।' राम ने अपने कृत्य से लोक में यह भी सन्देश दिया। 'कम्ब रामायण' के अनुसार जब भगवान राम रामेश्वरम् में शिवलिंग की स्थापना करते हैं, तो रावण को पुरोहित के रूप में बुलाकर स्थापना करवाते हैं।

राम ने स्त्रियों का विशेष सम्मान किया है। राम से पहले राजा की अनेक रानियाँ होती थीं, परन्तु राम ने एक पत्नीव्रत का पूर्ण निष्ठा से पालन कर लोकजीवन में आदर्श स्थापित किया। युद्ध में मृत्यु को प्राप्त रावण के पास जब मन्दोदरी आती है, तो श्रीराम उनकी छाया को प्रणाम करते हैं। माता कैकई के प्रति भरत तक ने असम्मान प्रकट किया, पर राम ने उन्हें पूर्ववत सम्मान दिया। सूर्पनखा को भी राम प्रणाम करते हुए कहते हैं, मैं विवाहित हूँ। बाली-वध, शम्बूक वध, सूर्पनखा की नाक कटवाना, सीता माता की अग्नि परीक्षा और उन्हें वन में भेज त्याग करना आदि प्रसंगों को षड्यन्त्रपूर्वक तोड़-मरोड़कर या प्रक्षिप्त कर प्रस्तुत किया जाता रहा है, ताकि लोकमानस में राम की छबि धूमिल हो। पर लोक-जीवन राममय है और हजारों वर्षों के बाद भी आस्था के सुदृढ़ भवन को कोई खंडित नहीं कर पाया।

लोक जीवन में सर्वत्र राम ही क्यों? इतने देवी-देवता हैं, पर 'राम' जैसा विश्वास और किसी पर नहीं, जन्म से लेकर मृत्यु तक राम ही राम। श्रीराम का समस्त जीवन लोक को समर्पित है। समाज को, समाज के हर वर्ग को चमत्कार के द्वारा नहीं, स्वयं के कार्यों से प्रेरणा देकर एक आदर्श उपस्थित करते हैं श्री राम। लोक-जीवन में समग्रता के रूप में राम उपस्थित हैं। चौपाइयों और राम-लीलाओं के माध्यम से लोक-जीवन में रचे-बसे राम शास्त्रों और मन्त्रों से परे अनपढ़ जन के मन में भी रमते हैं।

पुत्र के रूप में, भाई के रूप में, मित्र के रूप में, शिष्य के रूप में, पति के रूप में, सखा के रूप में, पुरुषों में उत्तम कैसे हुआ जा सकता है। धैर्य, प्रेम, उदारता, करुणा, वचनबद्धता और सत्य का विषम परिस्थितियों में भी कैसे निर्वहण करना है, यह सिखाने के लिए राम स्वयं उसी मार्ग पर चलते हैं। इसीलिए राम जन-जन के हैं, समस्त लोक के हैं। गुरु, माता-पिता, भाई, सेवक, मित्र, शत्रु, छोटे-बड़े सभी के प्रिय हैं। गँवई गीतों या लोक गीतों से जाना जा सकता है कि लोकमानस में राम किस तरह पीढ़ियों से रचे-बसे हैं और रामजी पर आम जनमानस कितना विश्वास करता है, कितना आत्मीय सम्बन्ध रखता है, देवता भी मानता है, सखा भी और अपने घर के सदस्य जैसा भी।

विभिन्न लोकोक्तियों में, मुहावरों में, गीतों में राम पर जनमानस का अटल विश्वास परिलक्षित होता है –

रामजी के चिरई रामजी के खेत।
खा ले चिरई भर भर पेट।।

भोजपुरी लोकगायन में एक प्रसिद्ध कथागीत गायन विधा है 'सोरठी', जिसका पूरा नाम सोरठी बिरजाभार भी है। इस सोरठी बिरजाभार की इन पंक्तियों में राम पर विश्वास देखिए –

रामे रामे रामे हो रामा,
रामेजी के नइया हो,
रामे लगइहें बेंड़ा पार नु ए राम।
रामजी की माया, कहीं धूप कहीं छाया।

प्रजा को, आम जन को इससे बढ़कर और क्या चाहिए –

दैहिक दैविक भौतिक तापा।

राम राज्य काहुहि नहिं ब्यापा।।

केवल राम ही नहीं, सभी सम्बन्धों के लिए रामायण के पात्र आदर्श स्वरूप में लोक जीवन में आत्मसात् हैं। एक पंजाबी लोकगीत में बिना किसी संशय के अद्भुत कामना है – **'बेटी किहो जिहा वर लोड़ीए? मैं तां सस्स मंगांगी कौशल्या, कि सोहरा दशरथ होवे। मैं ताँ वर मँगांगी श्रीराम, छोटा देवर लछमण होवे। मैं ताँ मँगागी अयुधियाजी दा राज।'**

जन्म के समय गाये जाने वाले सोहर गीतों में राम हैं –

जन्मे है राम रघुरैया, अवधपुर में बाजे बधैया।

कोशल्या के जन्में ललनवा ...

विवाह गीतों में सिया राम की आदर्श छबि –

बने दूल्हा छवि देखो श्रीराम की,

दुल्हन बनी सिया जानकी।

हरे बांस मंडप छाए, सिया जू को राम ब्याहन आए।

विवाह के समय गारी गीत –

राम जी से पूछे जनकपुर के नारी बता द बबुआ।

लोगवा देत काहे गारी बता द बबुआ।।

मुहावरों लोकोक्तियों के अतिरिक्त दैनिक दिनचर्या में राम सर्वत्र व्याप्त हैं – रामजी की माया, राम भरोसे, मुँह में राम बगल में छुरी, अभिवादनसूचक 'राम राम' या जै सिया राम, मुसीबत के समय जाहि बिधि राखे राम या राम भरोसे, विस्यमसूचक 'हे राम'! कुछ बुरा हो, तो 'राम-राम', शवयात्रा देखकर राम-राम और अन्तिम समय 'राम नाम सत्य है' तो है ही।

पश्चिम बंगाल के रामापाड़ा ग्राम में तो लगभग २५० वर्षों से सबके नाम राम के नाम पर रखे जाते हैं। राम पर इतना असीम विश्वास कि मैथिलीशरण गुप्त भी कह उठते हैं –

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।

कोई कवि बन बन जाए, सहज संभाव्य है।

उर्दू में भी शायर इकबाल ने राम को नायक माना।

है राम के वजूद पे हिन्दोस्तों को लाज।

अहल-ए-नजर समझते हैं, इसको इमाम-ए-हिन्द।।

उस समय की परिस्थिति में जब मुगलों का शासन था, लोक जीवन में हताशा, निराशा व्याप्त थी, तब बाबा तुलसी ने लोक भाषा अवधी में 'श्रीरामचरितमानस' की रचना की, तो राम जन-जन तक पहुँच कर हृदय में बस गये। माँ को अपने बच्चे में राम दिखे, भाई को भाई में राम दिखे, पत्नी को पति में राम दिखे, सेवक को स्वामी में राम दिखे, मित्र को मित्र में राम दिखे, तपस्वी को तपस्या में राम दिखे, त्यागी को त्याग में राम दिखे, भक्त को भगवान में राम दिखे, प्रजा को राजा में राम की कल्पना दिखी और राम सर्वत्र व्याप्त हो गये, आशा को सम्बल मिला। राम इसलिए भी लोक जीवन के नायक हो गये, क्योंकि राम में लोक जीवन के सारे स्वरूप तृप्त हुए।

संस्कृत, हिन्दी के अतिरिक्त मराठी, बांग्ला, तेलगु, तमिल, उड़िया, कन्नड़, मलयालम, गुजराती, असमिया आदि भाषाओं में राम कथाएँ प्रकाश में आईं। यहाँ तक कि उर्दू, अरबी, फारसी में भी राम कथा उपलब्ध हैं। यही नहीं, श्रीराम भारत से निकलकर विदेशी भू-भाग तथा वहाँ के भी लोक जीवन में विस्तारित हैं। बर्मा, थाईलैंड, इंडोनेशिया, फिलिपींस, तिब्बत, जापान, मंगोलिया, तुर्किस्तान, नेपाल, श्रीलंका आदि की प्राचीन भाषा में राम कथा पर बहुत सारी कृतियाँ उपलब्ध हैं। जावा, मलाया, कम्पूचिया, थाईलैंड आदि कई देशों में शैलचित्र शृंखलाओं में रामचरित का वर्णन हुआ है। अन्य साक्ष्यों से यह भी ज्ञात होता है कि राम ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में ही वहाँ के लोक जीवन में पहुँच गये थे। इस बात के भी इतिहास में प्रमाण मिलते हैं कि लोक जीवन में रामलीला का प्रचलन भी प्राचीन काल से है।

रामकथा 'मंगलभवन अमंगलहारी है'। इसमें सत्य एवं सौन्दर्यपूर्ण शिवत्व साथ है, इसीलिए इतने वर्षों बाद भी कोई इसके आनन्द को क्षति नहीं पहुँचा पाया। राम जन-जन के मस्तिष्क के साथ-साथ हृदय में बसते हैं। राम और राम-राज्य जन-जन के लिये मार्गदर्शक ही नहीं, प्रामाणिकता की कसौटी भी है। राम का जीवन किसी धर्म-विशेष के लिए नहीं, वरन् समस्त समाज के लिए एक आदर्श सशक्त और नैतिक नागरिक बनाने की आधारशिला रखता है। समाज में सत्य, प्रेम, करुणा के द्वारा कैसे शान्ति और सामंजस्य निर्मित किया जा सकता है, विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जा सकता है, भाईचारा निर्मित किया जा सकता है। राम ने केवल उपदेश नहीं दिये, अपने समस्त जीवन द्वारा आदर्श स्थापित किया। इसीलिए राम किसी एक धर्म से, किसी एक सम्प्रदाय से ऊपर उठकर सम्पूर्ण भारत के पर्याय हैं और अयोध्या में बना राम मन्दिर सम्पूर्ण भारत की, भारतवासियों की पहचान है। ○○○

रामगीता (५/५)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार हैं। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज हैं। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन श्रीराम संगीत महाविद्यालय, रायपुर के सेवानिवृत्त प्राध्यापक श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द ने किया है। – सं.)

महाराज जनक को लगा कि बड़ा संकट है। सामने ही श्रीराम खड़े हैं। अगर बता दें कि इन्होंने तोड़ा है, तो परशुरामजी राम पर सीधे फरसा चला देंगे। वात्सल्य इतना है कि राम के ईश्वरत्व की महिमा भूल गये हैं। अभी तक एक बार भूले, दो बार भूले, इस समय फिर घबराहट है। परशुरामजी महाराज तो साक्षात् आवेशावतार हैं। उनके प्रश्न का उत्तर जनकजी ने नहीं दिया। लेकिन प्रसन्न कौन हैं? –

कुटिल भूप हरषे मन माहीं। १/२६९/५

कुटिल राजा बड़े प्रसन्न हुए। अभी ये लोग दुखी थे कि धनुष मुझसे नहीं टूटा, इस राजकुमार से कैसे टूट गया? किसने तोड़ते देखा? क्या यह राजकुमार सचमुच अधिकारी है? वे लड़ने को तैयार थे। सच बात तो यह है कि जितने राजा थे, वे सबके सब अपने-अपने देवता से भी रूठे हुए थे। क्योंकि वे जब धनुष तोड़ने चले थे, तो अपने-अपने देवताओं को मनाया था। गोस्वामीजी ने कहा –

चले इष्टदेवन्ह सिर नाई। १/२४९/५

जो लोग पूजा पाठ करते हैं, उनकी कामना यदि पूर्ण न हो, तो अपने देवता से नाराज तो होते ही हैं कि इतनी हमने पूजा की और आपने कुछ नहीं किया, तो किस काम की पूजा? सभी राजा बहुत नाराज थे कि हमसे धनुष नहीं टूटा और टूटा भी तो इस राजकुमार से। लेकिन ज्योंहि परशुरामजी ने कहा कि अभी मैं धनुष तोड़नेवाले का सिर काटूँगा, तो सबसे पहले इन राजाओं ने अपने-अपने देवता को प्रणाम किया कि बड़ी कृपा की, धनुष हमसे नहीं तुड़वाया। तुड़वा दिया होता, तो सिर ही कट जाता। जयमाला की जगह फरसा ही गले पर पड़ता। किस तरह से उसकी परिभाषा बदलती रहती है। यह मनोविज्ञान है। किस तरह से व्यक्ति किसी वस्तु को बहुत चाहता है, तो कभी समझने लगता है कि अरे यह तो बहुत बड़ी विपत्ति का कारण है। पर परशुरामजी को उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं? जनक क्या अज्ञानी हैं? क्योंकि जनकजी को परशुरामजी ने तो अज्ञानी कहा ही, यहाँ तक कि कुछ-कुछ जनकपुरवासी भी कहने लगे थे। परशुरामजी ने क्रोध में कहा था और जनकपुरवासियों ने भावुकता में कहा। जनकपुरवासी देवताओं से यही प्रार्थना कर रहे थे। क्या? वे कहते हैं कि हे ब्रह्मा, हे देवता, जनकजी जैसे ज्ञानी में यह जो जड़ता आ गई है, उसे किसी तरह दूर कीजिए –

हरु बिधि बेगि जनक जड़ताई।
मति हमारि असि देहि सुहाई।। १/२४८/३

ब्रह्माजी ने कहा कि ठीक है, तुम्हारे कहने से इसकी जड़ बुद्धि को हम वापस ले लेते हैं। उसके बाद? जनकपुरवासी बोले – इनको हमारी बुद्धि के समान, बुद्धि दे दीजिए।

बिनु बिचार पनु तजि नरनाहू।
सीय राम कर करै बिबाहू।। १/२४८/४

– ये राम को देखने के बाद प्रतिज्ञा छोड़कर सीताजी का विवाह इनसे कर दें। किसी ने कहा – प्रतिज्ञा छोड़कर? प्रतिज्ञा थोड़े ही की है, उन्होंने तो हठ किया है। यह तो प्रतिज्ञा नहीं हठ है। **हठ कीन्हें अंतहुँ उर दाहू। १/२४८/५**

सारे शब्द बड़े अनोखे हैं। जनकजी ने जो प्रतिज्ञा की है, वह प्रतिज्ञा है कि हठ है? पहले तो प्रतिज्ञा मानी गई। जनकपुरवासी कहते हैं – नहीं, यह तो हठ है। यहाँ तक कि भावना के क्षण में जनकनन्दिनी श्रीसीताजी के मुख से निकल गया – **अहह तात दारुनि हठ ठानी। १/२५७/२**

पिताजी ने इतना बड़ा हठ ठान लिया। तर्क यह है। हठ माने कहा जाता है कि निरर्थक शब्द पर डटे रहना। इतिहास में इस हठ और सत्य को लेकर बड़ी विडम्बना है। कई लोग शब्द पर जमे रहना, डटे रहना, उसी को सत्य वाक्य का पर्यायवाची मानते थे। मेरे मुँह से जो निकल गया, वही होगा। मैं उसे छोड़ नहीं सकता। सत्य क्या है और हठ क्या है? जिसके पीछे केवल अपना अहं है कि मेरी बात रहनी चाहिए। वह तो वस्तुत: हठ है। जब कोई प्रतिज्ञा किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए की जाय, तब तो वह प्रतिज्ञा है। हठ और सत्य के अन्तर को इतिहास में बहुत कम लोगों ने समझा। महाभारत में तो बस इन्हीं प्रतिज्ञाओं के नाम से न जाने क्या-क्या कर रहे थे। जितने महाभारत के योद्धा हैं, वे सब किसी न किसी प्रतिज्ञा के वशीभूत होकर हठ में जुटे हुए थे।

जनकपुरवासी भावुकता में कह रहे हैं। उसका अभिप्राय यह है कि वर की योग्यता की परीक्षा के लिए ही तो महाराज ने प्रतिज्ञा की थी। पर जब श्रीराम जैसा कोई सामने हो, तो क्या उसके बाद भी उसकी परीक्षा ली जायेगी? ईश्वर की भी परीक्षा ली जाती है क्या? अगर ऐश्वर्य में देखें तो। अगर माधुर्य में देखें, तो जो इतना सुकुमार है, उससे यह आशा करना कि वह धनुष तोड़ दे। हंस की प्रशंसा करने के लिए हम यह कहें कि तुम अपनी पीठ पर सुमेरु पर्वत को उठा लो, तो हम तुम्हें श्रेष्ठ मानेंगे, यह तो अन्याय होगा। महाराज जनक अगर लक्ष्य विस्मृत हो गये और योग्य वर के स्थान पर अपने शब्द पर ही दृढ़ हो गये, तो वे हठी हैं।

लेकिन महाराज जनक नहीं मानते, तो क्या वे हठी थे? महाराज जनक का वह सूत्र सबके लिये उपयोगी है। गोस्वामीजी ने इसकी ओर संकेत किया। उन्होंने भगवान से कहा कि प्रभु, अब आप मुझे अपना मान लीजिये। भगवान ने कहा, तुम मेरे हो। ऐसे मैं नहीं मानूँगा। आप कह देंगे, आप तो बड़े उदार हैं। किसी ने कुछ कहा, तो आप कह देते हैं, उसे दुहरा देते हैं। मेरी एक कसौटी है। वह कसौटी क्या है? विनयपत्रिका में गोस्वामीजी कहते हैं –

तुम अपनायो तब जानि हौं जब मन फिरि परिहै।
जेहि सुभाव विषयनि लग्यो,
तेहि सहज नाथ सौ नेह छाड़ि छल करिहै।। २६८

मैं तब मानूँगा कि आपने मुझे अपना लिया है, जब मेरा मन जो विषयों की ओर जाता है, वह विषयों से अलग होकर आपसे प्रेम करने लगे, विषय-वासनाओं से मुक्त हो जाये, तब मैं मानूँगा कि सचमुच आपने मुझे अपना लिया, स्वीकार कर लिया। जनक का हठ नहीं था। जनक का तात्पर्य था कि आप साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हैं। प्रथम दर्शन में उनको लगा भी था। उसमें भी उनको यह संकेत मिला था। उनका तात्पर्य यह है कि भले ही मैंने महान तत्त्वज्ञ और ब्रह्मज्ञानी होने का सम्मान पा लिया, पर इतना होते हुए भी कहीं न कहीं मुझमें सात्त्विक अहंकार, पवित्र अहम् विद्यमान है। इसलिये आपकी इच्छा न होते हुए भी आप इस धनुष को तोड़िये। उनके मुँह से निकल भी गया था।

सहज बिरागरूप मनु मोरा। १/२१५/३

धनुष टूटने का अर्थ था, सब मिट जाने के बाद भी अहम् को मिटाना, जो केवल ईश्वर के लिये ही सम्भव है। इसलिए भले ही आपके लिए अपेक्षा न हो, किन्तु आपके द्वारा इसका तोड़ा जाना आवश्यक है।

भगवान श्रीराम से कुछ भक्तों ने बाद में पूछा कि अन्य राजा प्रयत्न कर रहे थे, किन्तु आप जनक नन्दिनी सीता से इतना प्रेम करते हैं, इसका वर्णन पुष्पवाटिका प्रसंग में है, पर आप उठे ही नहीं। प्रभु ने हँसकर कहा, जिनको पाने की इच्छा थी, वे उठे। तो आपको पाने की इच्छा नहीं थी क्या? बोले, मुझे पाने का क्या, मैं तो पा लिया था। पहले से ही वे मुझे मिली हुई हैं। वे मुझसे अलग थीं ही नहीं। जब मैं जानता था कि मुझसे भिन्न हैं ही नहीं, तो फिर मैं उन्हें पाने का प्रयत्न क्यूँ करूँ?

सूत्र वही है। आपको आवश्यकता ही नहीं है। आप परिपूर्ण हैं। सीताजी आपकी शक्ति हैं। प्रभु आप अपने आपमें परिपूर्ण हैं। पर हमारे जीवन की परिपूर्णता के लिये आवश्यकता है कि साधारण अहंकार ही नहीं, जो समष्टि अहंकार है, उस अहंकार का भी विनाश हो। मैं जानता हूँ, श्रीसीताजी आपकी शक्ति हैं। समर्पण तब करूँगा, जब यह नष्ट होगा। नहीं तो समर्पण में अभिमान बचा रह जायेगा। आप अपनी कन्या जब किसी को देते हैं, तो यह बात मन में होती है कि मैंने अपनी कन्या दी। मानो जनक का पक्ष यह था कि पहले मैं टूटे, तब समर्पण होना चाहिए। नहीं तो समर्पण के बाद भी अभिमान बढ़ सकता है। इसलिए जिसे जनकपुरवासियों ने हठ कहा, उसे उन्होंने कहा कि ठीक है, अगर हठ भी है, तो किसलिये? अहंकार तोड़ने के लिये।

इसीलिए संत ने बीच का मार्ग निकाल दिया। लक्ष्मणजी ने कहा, मैं तोड़ दूँ? बाद में किसी ने कहा आपने ऐसी गर्जना की, तोड़ दूँ, तोड़ दूँ, पर आपने तोड़ा नहीं। उन्होंने कहा कि मैं पहले प्रयास करता, पर मुझे धनुष तो तोड़ना ही नहीं था। तब आप क्यों कह रहे थे? लक्ष्मणजी ने कहा, मुझे तो केवल जनक का भ्रम तोड़ना था। वह काम पूरा हो गया। भगवान श्रीराम के द्वारा उनकी आकांक्षा पूरी हो गई।

जब तक व्यष्टि अभिमान कौन कहे, समष्टि अभिमान भी, कहीं भी पवित्र रूप में भी जीवन में शेष है, तो अभी जीवन में पूर्णता नहीं है। जनक उस पर दृढ़ रहे। जब धनुष टूट गया, तो उस के बाद परशुरामजी जनकजी से कहते हैं – तू जड़ है। तुमने क्यों तुड़वा दिया मेरे गुरुजी का धनुष? जनकजी ने मन में कहा कि यह मुझसे मत पूछिए कि क्यों तुड़वा दिया, गुरुजी से जाकर पूछ लीजिए। उन्होंने धनुष तो दिया, किन्तु बाण दिया नहीं, तो मैं चलवाता कहाँ से? तब तो तोड़वाना ही रह गया। बाण क्यों नहीं दिया? जब जीवन में लक्ष्य-भेद पूरा हो गया और अब कोई प्रयोजन रहा ही नहीं, तब इसको समाप्त ही हो जाना चाहिए था।

यह जो संवाद है, उसमें लगता है कि जैसे एक-दूसरे पर आक्षेप है। पर उसमें तत्त्व यह था कि लक्ष्य पूरा होने के बाद अब धनुष भी टूटना चाहिये। वह जो धनुष है, जब टूटेगा, तो राम के द्वारा टूटेगा। परशुरामजी महाराज अगर भगवान शंकर से पूछते, तो वे कहते कि यह तो मेरी ही आज्ञा थी, मेरा ही संकल्प था। पर उन्होंने शंकरजी से पूछा नहीं, पर बाद में उन्हें ज्ञात हुआ। इसका क्रम यह है कि तीनों महापुरुषों के जीवन में समर्पण है। पहले विश्वामित्रजी के जीवन में समर्पण –

बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही। १/२०८(ख)/७
आयुध सर्ब समर्पि कै प्रभु निज अश्रम आनि। १/२०९/०

फिर जनक ने समर्पण किया –

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई।
तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिस्व कल कीरति नई।।
१/३२३/छ

अन्त में परशुरामजी महाराज ने अपना धनुष अर्पित कर दिया। उस धनुष-अर्पण में भी कितनी बढ़िया बात है? वे कह रहे थे कि धनुष को खींचकर दिखाओ। भगवान ने हाथ नहीं बढ़ाया, धनुष स्वयं चला गया। इसका अर्थ क्या हुआ? अर्पण करनेवाला कोई है, ऐसा भी नहीं कह सकते और भगवान राम भी उसको लेने के लिए कोई उत्सुक नहीं दिखाई देते। इन सब का तात्पर्य यह है कि हमारे जीवन में रामायण का क्रमिक चरित्र, सारी लीला घटित होने लगे। समर्पण के पहले जो रामायण का क्रम है, उसमें विज्ञान के द्वारा ही भगवान श्रीराघवेन्द्र ताड़का का वध कर देते हैं। शंकरजी का समष्टि अहंकार, पवित्रतम अभिमान का धनुष भी स्वयं अपने आप टूटकर गिर जाता है। जनकजी के अन्त:करण में जो एक आग्रह था, वह परिपूर्ण होता है। इन सब का तात्पर्य मानो यह है कि विश्वामित्र, महाराज जनक और आवेशावतार परशुरामजी के जीवन में भी परिपूर्णता तभी है, जब कहीं वे असमर्थता का अनुभव करें। उसके बाद भगवान के द्वारा उसे सम्पन्न किया जाये।

सियावर रामचन्द्र की जय। **(क्रमश:)**

कविता

कर ले बजरंगी से प्रीत

सदाराम सिन्हा 'स्नेही'

बीर बजरंगी से बढ़कर कोई नहीं मनमीत ।
महाबाहु महाबली से मनुवा तू कर ले प्रीत ।।
कर ले बजरंगी से प्रीत
शक्तिमान का संग हो जहान से जिसके साथ ।
मरुत्वान का जिसके सिर पर हो कृपा का हाथ ।।
गदाधारी की दया से क्यों रहेगा भयभीत ।।
कर ले...
बीरबली हैं सबके कष्ट हरनेवाले ।
महाबली हैं भक्तन को बल-बुद्धि देनेवाले ।।
विश्वविहारी की कृपा से जीवन होगा मुखरित ।।
कर ले...
सीताजी का अतिशय शोक दूर करनेवाले ।
सुरसा और अक्षय कुमार को मारनेवाले ।।
अमंगलहारी लीला देख सब हो जाते विस्मित ।।
कर ले...
सुषेण बैद्य को लंका से लाकर पहुँचाये ।
लक्ष्मण को संजीवनी लाकर प्राण बचाये ।।
सदाराम बजरंगी का गाते सदा जयगीत ।। कर ले...

राम-नाम ने तुलसी का जीवन बदल दिया

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

बच्चो, आज हम मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के महान रामभक्त सन्त कवि गोस्वामी तुलसीदास जी के विषय में पढ़ेंगे, जिनका जीवन राम-नाम से बदल गया। इनके जन्म से जुड़ी कई अद्‌भुत बातें हैं ! जैसे जन्म के बाद बालक तुलसीदास रोये नहीं, किन्तु उनके मुख में बत्तीसों दाँत थे। उनके मुख से पहला शब्द राम निकला। इसलिये उन्हें रामबोला भी कहा जाता है। उनका डील-डौल पाँच वर्ष के बालक-सा था। इस प्रकार के बच्चे का जन्म देखकर अनिष्ट की आशंका से उनकी माताजी हुलसी देवी ने बालक को दासी के हाथ उसके ससुराल भेज दिया और अगले ही दिन उनके माता जी की मृत्यु हो गई। दासी चुनियाँ ने उन्हें पाँच वर्ष तक पाला। तत्पश्चात् उसकी भी मृत्यु हो गई। अब तो बालक तुलसीदास अनाथ ही हो गये। वे द्वार-द्वार भटकने लगे। इससे

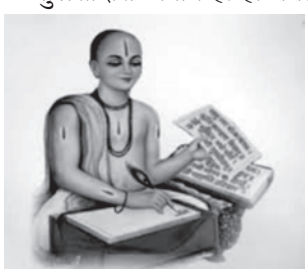

तुलसीदासजी ११ अगस्त, १५११ से ३० जुलाई, १६२३

जगज्जननी माता पार्वती को उन पर दया आ गयी और वे ब्राह्मणी के वेष में प्रतिदिन उसके पास जातीं और उसे अपने हाथों भोजन करा आतीं।

इधर भगवान शंकर जी की प्रेरणा से रामशैल पर रहने वाले श्री अनंतानन्दजी के प्रिय शिष्य श्री नरहरि जी ने इस बालक को ढूँढ निकाला और उसका नाम रामबोला रखा। उसे वे अयोध्या ले गये और वहाँ उन्हें विद्याध्ययन कराने लगे। उनकी बुद्धि बड़ी प्रखर थी। एक बार गुरु-मुख से जो सुन लेते थे, उन्हें वह कंठस्थ हो जाता था। वहाँ से कुछ दिन बाद गुरु-शिष्य दोनों शूकर क्षेत्र (सोरों) पहुँचे। श्री नरहरि जी ने तुलसीदास को रामचरित सुनाया। कुछ दिन बाद वे काशी चले गये। काशी में शेष सनातन जी के पास रहकर उन्होंने पन्द्रह वर्ष तक वेद-वेदांग का अध्ययन किया। फिर वे अपने गुरु जी से आज्ञा लेकर वापस अपनी जन्मभूमि को लौट आये। भारद्वाज गोत्र की एक सुन्दरी कन्या के साथ उनका विवाह हुआ। एक बार उनकी पत्नी अपने भाई के साथ मायके गईं। पीछे-पीछे तुलसीदासजी भी वहाँ पहुँच गये। उन्होंने वहाँ से उन्हें वापस जाने को कहा।

तुलसीदासजी को बात लग गई। वे बिना रुके वहाँ से प्रयाग आये। वहाँ उन्होंने गृहस्थवेश का त्यागकर साधुवेश ग्रहण किया। वहाँ से तीर्थाटन करते हुए काशी पहुँचे। वहाँ वे रामकथा कहने लगे। वहाँ उन्हें एक दिन एक प्रेत मिला, जिसने उन्हें हनुमानजी का पता बतलाया। हनुमानजी से मिलकर उन्होंने श्रीरघुनाथ जी का दर्शन कराने की प्रार्थना की। हनुमानजी ने उन्हें चित्रकूट जाने को कहा, जिससे वे वहाँ पहुँचे। चित्रकूट के रामघाट पर वे पहली बार में उन्हें पहचान न सके। दूसरी बार श्रीराम बालस्वरूप में तुलसीदासजी से मिलकर बोले – बाबा ! हमें चन्दन दो। हनुमानजी ने सोचा, वे इस बार भी धोखा न खा जायें, इसलिए उन्होंने तोते के रूप में आकर यह दोहा कहा –

चित्रकूट के घाट पर भइ संतन की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसें तिलत देत रघुबीर।।

भगवान शिव व माता पार्वती की आज्ञा से तुलसीदासजी ने लोकभाषा में धार्मिक और भक्ति साहित्य को सरल और लोकप्रिय बनाया।

उन्होंने रामचरितमानस और हनुमान चालीसा की रचना की। साथ में उन्होंने समाज-सुधार के लिये भी काफी कार्य किया। तुलसीदासजी को आदिकाव्य रामायण के रचयिता महर्षि वाल्मीकि का अवतार भी माना जाता है।

तो बच्चो, इस वर्ष रामनवमी ६ अप्रैल, २०२५ को है। इस उपलक्ष्य में आप यह संकल्प लेकर रामनाम का जप प्रारम्भ करें कि जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास जी का जीवन रामनाम लेने से परिवर्तित हो गया, वैसे ही हम भी अपने जीवन में परिवर्तन लायेंगे। ○○○

रामनवमी विशेष

हिन्दी में रामकाव्य की परम्परा

डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि'
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन श्री रघुवीर बिहारु।।

रामकाव्य की परम्परा का स्मरण आते ही यह ध्यान स्वत: चला जाता है कि राम का सम्बन्ध रोम-रोम से है और कण-कण से है, तो काव्य में इसका होना स्वाभाविक है। राम का न होना, सृष्टि का न होना है। इसलिए हम रामकाव्य परम्परा को अनादिकाल से पाते हैं। जहाँ तक साहित्य की बात होती है और वाङ्मय की चर्चा होती है, तो इसका स्रोत और प्रादुर्भाव हमें संस्कृत के वैदिक साहित्य में प्राप्त हो ही जाता है और हमें सर्वप्रथम संस्कृत वाङ्मय की ओर देखने के लिए विवश होना पड़ता है, किन्तु हम जब हिन्दी में रामकाव्य की परम्परा के विकास का स्वरूप देखना चाहते हैं, तो हमें प्रथम दृष्टया रामकाव्य के सिरमौर महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी को प्रतिमान और मध्यमान के रूप में रखना पड़ता है। तब हम तुलसी के पूर्व और तुलसी के परवर्ती हिन्दी रामकाव्य की परम्परा का आकलन करते हैं, तब इसी मानदंड पर हम रामकाव्य की परम्परा का सिंहावलोकन कर सकते हैं।

रामकथा का मूलस्रोत संस्कृत वाङ्मय का वाल्मीकि रामायण है, जिसे आद्यकाव्य माना जाता है। आर्षकाव्य की परम्परा में महाभारत में भी कुछ रामकथा का वर्णन प्राप्त होता है। इसी प्रकार से अगस्त्य संहिता, राघवी संहिता के साथ अनेक उपनिषदों और विभिन्न पुराणों – भागवतपुराण, वायुपुराण, विष्णुपुराण आदि में भी रामकाव्य की परम्परा परिलक्षित होती है। नास्तिक दर्शनों जैन और बौद्धधर्मों में भी रामकथा के सूत्र प्राप्त होते हैं। जातक की कथाओं में दशरथ जातक का उल्लेख प्राप्त होता है। विमलदेव सूरि द्वारा प्रणीत जैन ग्रन्थ पउमचरिय में भी रामकथा का वर्णन मिलता है। हिन्दी साहित्य में भक्ति के प्रादुर्भाव के साथ दक्षिण के आलवार सन्तों के द्वादश कवियों में नम्म आलवार (शठकोप) को राम की पादुका का अवतार माना जाता है। इनकी रचना तिरुवयमोलि भी रामभक्ति का साहित्य है। यह रामकाव्य परम्परा दक्षिण के आचार्य रंगनाथ मुनि, पुण्डरीकाक्ष, राममिश्र, यामुनाचार्य से आगे चलते हुए आचार्य रामानुज के द्वारा रामभक्ति सम्प्रदाय का विकास होता है। उन्हें रामकाव्य के सिद्धान्तों का प्रतिपादक माना गया। इतना ही नहीं, संस्कृत ग्रन्थों के साथ-साथ पालि और प्राकृत में भी रामकाव्य के ग्रंथों की रचना की गई। यद्यपि संस्कृत के अनेकानेक कवियों के साथ महाकवि कालिदास, भास, भवभूति अनेक ऐसे रचनाकार हुए जिन्होंने रामकाव्य को बहुत ऊँचाई दी।

हिन्दी साहित्य में रामकाव्य का विधिवत विकास स्वामी रामानन्द के द्वारा माना जाता है – **रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले।** इसीलिए रामकाव्य की धारा में स्वामी रामानन्दाचार्य जी को प्रमुख प्रतिष्ठापक के रूप में माना गया और रामानन्दी सम्प्रदाय का प्रवर्तक बताया गया, जिन्होंने १४वीं शताब्दी में रामकाव्य की परम्परा को बहुत महत्त्व प्रदान किया। स्वामी रामानन्दाचार्य राघवानन्द के शिष्य और राम भक्ति के आचार्य थे। रामानन्द और कबीरदास के बारे में एक प्रसिद्ध जनश्रुति मिलती है –

भक्ति द्राविड़ उपजी, लाए रामानन्द।
प्रगट किया कबीर ने चौदह भुवन नवखण्ड।।

यही कारण है कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उन्हें काव्य का प्रथम कवि माना है। उनकी कुल सत्रह रचनाओं में वैष्णवमताब्जभास्कर और रामार्चनपद्धति विशेष चर्चित है। इस परम्परा के दूसरे आचार्य अग्रदास कृष्णदास पयहारी

के शिष्य और स्वामी नाभादास के गुरु माने जाते हैं। स्वामी अग्रदास ने ध्यानमंजरी जैसी प्रमुख रचना की है। इनके उपरान्त वाल्मीकि रामायण के रूपान्तरकर्ता स्वामी विष्णुदास, अंगदपैज और सत्यवती कथा के रचयिता ईश्वर दास का नाम उल्लेखनीय है। इसी प्रकार से रामकाव्य परम्परा के कुछ अन्य ऐसे कवि हैं, जिन्होंने रामकाव्य के सुमेरु गोस्वामी तुलसीदास से पूर्व रामकाव्य की परम्परा को विकसित और पल्लवित किया है। उनमें मुनि लावण्य, जिनराज सूरि, ब्रह्मजिनदास, ब्रह्मरायमल और सुन्दरदास का नाम लिया जा सकता है। इसी रामकाव्य के स्वामी नाभादास और प्रियादास ने भक्तमाल की परम्परा का भी प्रणयन किया है।

रामकाव्य की निकष के आधार-स्तम्भ गोस्वामी तुलसीदास जी हैं। ये अपनी रचनाओं की उत्कृष्टता के कारण आज तक रामकाव्य परम्परा के सिरमौर कवि के रूप में स्थापित हैं। जब हम रामकाव्य की चर्चा करते हैं, तो जैसे 'पुराकविनामगणनाप्रसंगे' की भाँति कालिदास का नाम संस्कृत में आता है, वैसे ही 'रामचरितगणनाप्रसंगे' में गोस्वामी तुलसीदास का नाम हिन्दी साहित्य में, विशेषत: रामकाव्य में बहुत आदर के साथ लिया जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनकी कुल बारह प्रामाणिक रचनाओं को आधार बनाकर रामकाव्य की परम्परा के सर्वोत्कृष्ट कवि के रूप में स्थापित किया है, जिनमें इनकी विशेष रचना रामचरितमानस है। इसके साथ ही विनयपत्रिका, गीतावली, कृष्णगीतावली, कवितावली, दोहावली, वैराग्य संदीपनी, बरवै रामायण, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, रामलला नहछू, रामाज्ञा प्रश्न आदि इनका प्रधान-ग्रन्थ माना गया है।

रीतिकाल में रामकाव्य की सरिता भी प्रवाहित होती रही है। रीतिकाल के प्रवर्तक आचार्य केशवदास ने रामचन्द्रिका की रचना की, तो सेनापति ने कवित्त-रत्नाकर के चतुर्थ तरंग में राम का जीवन वर्णित किया है। रीति कालीन अन्य कवियों में मधुसूदन, पद्माकर, रघुनाथदास, रघुराज सिंह, रसिक बिहारी ने प्रबन्धकाव्य के रूप में रामकथा को विस्तार दिया। कृपानिवास, विश्वनाथ सिंह जूदेव ने भी अपनी रचनाओं के माध्यम से रामकाव्य को आगे बढ़ाया। इस कालखण्ड में रामकाव्य की शृंखला को अटूट बनानेवाले कवियों में प्राणचन्द चौहान, उदयराम, महाराज पृथ्वीराज, रायमल पाण्डे, माधवदास चारण, हृदय राम भल्ला, मलूकदास, लालदास, नरहरि, कपूरचन्द, रायचन्द, बालकृष्ण नायक, रामप्रियाशरण, यमुनादास जानकीरसिक शरण, रामसखी, प्रेमसखी, रामचरणदास, जीवाराम, जनकराज किशोरीशरण का भी उल्लेखनीय नाम है। कृष्ण-भक्त कवियों ने भी यत्र-तत्र राम का गुणगान करके रामकाव्य परम्परा को ऊर्जस्वित किया है।

आदिकालीन पृथ्वीराजरासो के दशावतार वर्णन से लेकर भक्तिकाल, रीतिकाल में जिस रामकाव्य का उज्ज्वल गान हुआ, उसका स्वरूप आधुनिक युग में भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

आधुनिक कालखण्ड में साकेत, पंचवटी के रचयिता मैथिलीशरण गुप्त ने रामकाव्य को महत्ता प्रदान की। इन्होंने अपने साकेत में स्पष्ट लिखा है –

राम तुम्हारा चरित्र स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाये सहज संभाव्य है।।

इसी प्रकार से साकेत-संत के रचयिता बलदेव प्रसाद मिश्र, वैदेही वनवास के रचनाकार हरिऔध और रामचरित चिन्तामणि के कवि रामचरित उपाध्याय आदि ने अपने प्रबन्धकाव्य के द्वारा रामकाव्य को नई गति प्रदान की। आधुनिक काल के श्रेष्ठ कवियों में केदारनाथ मिश्र प्रभात का कैकेयी, श्यामनारायण पाण्डेय का तुमुल, जय हनुमान, बालकृष्ण शर्मा नवीन की उर्मिला, रघुवीरशरण मिश्र की भूमिजा, नरेश मेहता का संशय की एक रात, रामेश्वरदयाल दुबे का सौमित्र, सुमित्रानन्दन पन्त का पुरुषोत्तम राम, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का पंचवटी प्रसंग के साथ-साथ राम की शक्तिपूजा आदि कालजयी रचनायें रामकाव्य के महत्त्व को वर्णित कर स्वयं धन्य हो गयी हैं। रामकाव्य की इतनी लम्बी समृद्ध दूसरी काव्य-परम्परा संस्कृत भाषा को छोड़कर हिन्दी ही नहीं, अन्य किसी भी भाषा में नहीं है।

○○○

जब तक व्यक्ति अहंकारयुक्त रहता है, तब तक वह दुख भोगने के लिए बाध्य है। जब अहंकार नहीं रहता, तब कोई कष्ट नहीं होता। अतः उत्तम यह है कि बिना अहंकार के रहा जाए।

– श्रीरामचन्द्र

प्रश्नोपनिषद् (५८)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

समाधान (वेदान्ती) – न असौ विशेषो वाङ्-मात्रत्वात्। प्राग्भोगोत्पत्तेः केवल-चिन्मात्रस्य पुरुषस्य भोक्तृत्वं नाम विशेषो भोग-उत्पत्ति-काले चेत्-जायते, निवृत्ते च भोगे पुनः तद्-विशेषाद्-अपेतः-चिन्मात्र एव भवति-इति चेत् ;

भाष्यार्थ – यह तो शब्दमात्र होने के कारण, कोई (सच्ची) विशेषता नहीं है। यदि भोग उत्पत्ति के पूर्व केवल चैतन्य-मात्र-रूप पुरुष में, भोग की उत्पत्ति के समय ही भोक्तृत्व-रूप कोई विशेषता प्रकट होती है और भोग के बाद वह विशेषता दूर हो जाने पर, वह पुन: चैतन्य-मात्र ही रह जाता है, यदि ऐसा कहें तो;

भाष्य – महद्-आदि-आकारेण च परिणम्य प्रधानं ततोऽपेत्य पुनः प्रधानं स्वरूपेणावतिष्ठते इति अस्यां कल्पनायां न कश्चित् विशेष इति वाङ्मात्रेण प्रधान-पुरुषयोः विशिष्ट-विक्रिया-कल्प्यते।

भाष्यार्थ – प्रधान (प्रकृति) भी महत् आदि के रूप में परिणत होकर, उनसे निवृत्त हो जाने पर पुन: प्रधान-रूप से ही, अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है, इस कल्पना में भी कोई विशेषता नहीं है। अत: प्रधान और पुरुष के विशिष्ट विकार की कल्पना केवल तुम्हारे शब्द-मात्र ही हैं।

शंका (सांख्यवादी) – अथ भोगकाले अपि चिन्मात्र एव प्राग्वत् पुरुष इति चेत्।

– ठीक है, परन्तु पुरुष भोग के समय भी पूर्ववत् चैतन्य-मात्र ही है, यदि ऐसा कहे तो!

वेदान्ती – न तर्हि परमार्थतः भोगः पुरुषस्य।

– परन्तु इससे वास्तविक रूप से पुरुष का भोग सिद्ध नहीं होता।

सांख्यवादी – भोगकाले चिन्मात्रस्य विक्रिया परमार्थ-एव तेन भोगः पुरुषस्य इति चेत्।

– भोग के समय चैतन्य-मात्र का विकार वास्तविक ही होता है, इससे पुरुष का भोग सिद्ध होता है, यदि ऐसा कहें तो!

वेदान्ती – न; प्रधानस्य अपि भोगकाले विक्रियावत्-त्वात्-भोक्तृत्व-प्रसङ्गः।

– नहीं, क्योंकि भोगकाल में तो प्रधान (प्रकृति) में भी विकार होता है।

चिन्मात्रस्य एव विक्रिया भोक्तृत्वम् इति चेत्, औष्ण्य-आदि-असाधारणम्-अधर्मवताम्-अग्नि-आदीनाम्-अभोक्तृत्वे हेतु-अनुपपत्तिः।

– यदि कहो कि चैतन्य में भी भोक्तृत्व रूप विकार आता है, तो उष्णता आदि असाधारण गुणोंवाले अग्नि आदि को अभोक्ता मानने का कोई कारण नहीं दिखता। (जैसे चेतनता पुरुष का असाधारण गुण है, वैसे ही उष्णता आदि अग्नि आदि के असाधारण गुण हैं।)

शंका – प्रधान-पुरुषयोः द्वयोः युगपत्-भोक्तृत्वम् इति चेत्।

– यदि प्रधान और पुरुष दोनों का संयुक्त रूप से भोक्तृत्व माना जाए तो?

वेदान्ती – न; प्रधानस्य अपि पारार्थ्य-अनुपपत्तेः। न हि भोक्त्रोः द्वयोः इतरेतर-गुण-प्रधान-भाव उपपद्यते प्रकाशयोः इव इतरेतर-प्रकाशने।

– ऐसा नहीं हो सकता। क्योंकि इससे प्रधान (प्रकृति) का दूसरे (पुरुष) के लिये (भोक्तृत्व) का (सांख्य-मत) सिद्ध नहीं होगा। जैसे दो ज्योतियों द्वारा एक-दूसरे को प्रकाशित करने से, दोनों ज्योतियों में परस्पर गौण-मुख्य भाव नहीं हो सकता, वैसे ही दो भोक्ताओं में भी परस्पर गौण-मुख्य भाव नहीं हो सकता। **(क्रमशः)**

जीवन को सकारात्मक और सार्थक कैसे बनाएँ?

स्वामी गुणदानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

आज के युवा, जो आधुनिक जीवन की चुनौतियों, तनाव और दुविधाओं का सामना कर रहे हैं, वे अपने जीवन को सकारात्मक और सार्थक बना सकते हैं। हम जानते हैं कि रामायण केवल एक पौराणिक कथा नहीं है, बल्कि यह जीवन के आदर्शों, नैतिक मूल्यों और प्रेरणादायक सन्देशों का अमूल्य भण्डार है। इसमें ऐसी अनेक घटनाएँ हैं, जो जीवन की कठिनाइयों को पार करने और सही दिशा में आगे बढ़ने का मार्ग दिखाती हैं। आइए, रामायण की कुछ महत्त्वपूर्ण कहानियों एवं प्रेरणादायक घटनाओं पर दृष्टि डालें, जो युवाओं को सकारात्मक मार्ग दिखा सकती हैं।

१. मर्यादा का पालन : श्रीराम का आदर्श जीवन

श्रीराम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है, क्योंकि उन्होंने हमेशा धर्म और मर्यादा का पालन किया। पिता की आज्ञा का पालन करते हुए उन्होंने राजगद्दी छोड़कर वनवास स्वीकार किया। यह घटना युवाओं को यह सिखाती है कि अपने कर्तव्यों और मूल्यों के प्रति निष्ठावान् रहना सबसे महत्त्वपूर्ण है, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों।

२. त्याग और सहनशीलता : सीता माता का वनवास

सीता माता का वनवास हमें त्याग और सहनशीलता की सीख देता है। उन्होंने हर कठिनाई का सामना धैर्य और शान्ति से किया। उनके त्याग और सहनशीलता से युवाओं को यह प्रेरणा मिलती है कि जीवन में आने वाली कठिनाइयों का सामना दृढ़ता और आत्मबल से करना चाहिए।

३. मित्रता और सहयोग : राम-सुग्रीव की मित्रता

राम और सुग्रीव की मित्रता हमें सच्चे मित्र का महत्त्व समझाती है। दोनों ने एक-दूसरे के संकट को अपना समझा और एकजुट होकर कठिनाइयों का समाधान निकाला। यह घटना सिखाती है कि जीवन में सच्चे मित्रों का होना और उनके साथ विश्वास तथा सहयोग बनाए रखना कितना आवश्यक है।

४. लक्ष्य पर दृढ़ता : हनुमान की भक्ति और परिश्रम

हनुमानजी की लंका-यात्रा उनके साहस, समर्पण और परिश्रम का अद्भुत उदाहरण है। उन्होंने सीता माता को खोजने के लिए अपने सभी भय और सीमाओं को पार किया। यह घटना युवाओं को सिखाती है कि अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पूरे समर्पण और परिश्रम से प्रयास करना चाहिए।

५. करुणा और क्षमा : विभीषण का उदाहरण

विभीषण ने अपने भाई रावण के अधर्म का साथ न देकर धर्म का मार्ग चुना। उन्होंने राम के साथ मिलकर अपने परिवार के विरोध में भी सत्य और न्याय का समर्थन किया। यह घटना युवाओं को सिखाती है कि सत्य के साथ खड़ा होना और करुणा एवं क्षमा को अपनाना हमेशा प्रशंसनीय है।

६. श्रीराम का त्याग और कर्तव्यनिष्ठा

श्रीराम का जीवन त्याग और कर्तव्यनिष्ठा का प्रतीक है। जब कैकयी ने राजा दशरथ से श्रीराम के लिए १४ वर्ष का वनवास माँगा, तो राम ने बिना किसी उलाहने और परिवेदना के इसे स्वीकार कर लिया। उनके इस त्याग ने परिवार और समाज के प्रति अपने कर्तव्य को प्राथमिकता देने का सन्देश दिया।

सीख : यह प्रसंग युवाओं को सिखाता है कि जीवन में कठिन परिस्थितियों में भी अपने कर्तव्यों का पालन करना सर्वोपरि है।

७. लक्ष्मण का सेवा और समर्पण-भाव

लक्ष्मण ने राम और सीता माता की सेवा में अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। वनवास के दौरान उन्होंने हर सुख-सुविधा का त्याग कर केवल अपने भाई और भाभी

की सेवा की।

सीख : यह घटना युवाओं को सम्बन्धों में नि:स्वार्थता, समर्पण और सेवाभाव का महत्त्व समझाती है।

८. भरत का भ्रातृ-प्रेम और त्याग

भरत, जिन्हें अयोध्या का राजा बनाया गया था, उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और राम की खड़ाऊँ को राजगद्दी पर रखकर शासन किया। यह उनकी निष्ठा और राम के प्रति प्रेम का अद्भुत उदाहरण है।

सीख : यह युवाओं को भाईचारे, त्याग और सच्चे प्रेम का महत्त्व सिखाती है।

९. जटायु का साहस और धर्म का पालन

जब रावण सीता माता का हरण कर रहा था, तब वृद्ध पक्षी जटायु ने अपने जीवन की परवाह किए बिना रावण से युद्ध किया। भले ही वह रावण से पराजित हो गया, लेकिन उसने अपना कर्तव्य निभाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

सीख : यह घटना सिखाती है कि सत्य के लिए लड़ना और अपने कर्तव्य का पालन करना सबसे बड़ी वीरता है।

१०. हनुमान का अटूट विश्वास और परिश्रम

हनुमानजी का राम के प्रति समर्पण और विश्वास अद्वितीय है। समुद्र पार करते समय उनके विश्वास और परिश्रम ने उन्हें सफलता दिलाई। उन्होंने सीता माता तक राम का सन्देश पहुँचाने के लिए हर बाधा को पार किया।

सीख : यह घटना सिखाती है कि आत्मविश्वास और परिश्रम से असम्भव को भी सम्भव बनाया जा सकता है।

११. शबरी की भक्ति और प्रतीक्षा

शबरी, जो एक साधारण वनवासी महिला थीं, ने वर्षों तक राम के आने की प्रतीक्षा की। उन्होंने अपने भक्ति और समर्पण से यह दिखाया कि सच्चे प्रेम और श्रद्धा के लिए कोई जाति, धर्म या स्थिति बाधा नहीं बन सकती।

सीख : यह घटना सिखाती है कि धैर्य और विश्वास जीवन में चमत्कार ला सकता है।

१२. विभीषण का धर्म-समर्थन

रावण के भाई, विभीषण ने अधर्म का साथ न देकर धर्म का समर्थन किया और राम के साथ खड़े हुए। इसके लिए उन्हें अपने परिवार का विरोध सहना पड़ा, लेकिन उन्होंने सत्य का साथ नहीं छोड़ा।

सीख : यह घटना युवाओं को सिखाती है कि चाहे परिस्थितियाँ जैसी भी हों, सत्य और न्याय के साथ खड़ा होना अदम्य साहस का प्रतीक है।

१३. सीता माता का साहस और आत्मसम्मान

सीता माता ने अपने हरण के बावजूद साहस और आत्मसम्मान को नहीं छोड़ा। उन्होंने रावण के प्रलोभन और दबाव का सामना किया और अपनी मर्यादा को बनाए रखा।

सीख : यह घटना सिखाती है कि हर परिस्थिति में अपने आत्मसम्मान और नैतिकता को बनाए रखना बहुत आवश्यक है।

१४. राम-रावण युद्ध : बुराई पर अच्छाई की जीत

राम-रावण युद्ध केवल दो व्यक्तियों का संघर्ष नहीं था, बल्कि यह अच्छाई और बुराई के बीच की लड़ाई थी। राम ने अपनी रणनीति, संयम और सहनशीलता से रावण को पराजित किया।

सीख : इससे युवाओं को सीख मिलती है कि धैर्य और सत्य मार्ग पर चलकर बड़ी से बड़ी बाधा को भी पार किया जा सकता है

निष्कर्ष : रामायण युवा-जीवन के लिए अद्भुत मार्गदर्शक है। रामायण की कहानियाँ केवल धार्मिक कथाएँ नहीं हैं, बल्कि जीवन के मार्गदर्शन के लिए अमूल्य स्रोत हैं। रामायण की कहानियाँ युवाओं को त्याग और सहनशीलता, नैतिकता, और आत्मसम्मान, अपने कर्तव्य का पालन, कर्तव्यों और मूल्यों के प्रति निष्ठावान् रहना, बहादुरी, धैर्य और साहस, त्याग और समर्पण, दृढ़ता और आत्मबल, आत्मविश्वास और परिश्रम, विश्वास और सहयोग, रणनीति और संयम, सेवा और सच्चाई का महत्त्व समझाती हैं।

आज के युवा, जो तेजी से बदलती दुनिया में अपने लक्ष्य की खोज कर रहे हैं, रामायण से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को सकारात्मक दिशा में ले जा सकते हैं। युवाओ, रामायण की इन कहानियों से सीख लेकर तथा जीवन में इन आदर्शों को अपनाकर अपने चरित्र और भविष्य को सकारात्मक, उज्ज्वल और सार्थक बनाओ। ○○○

श्रीरामकृष्ण-स्तुति

रामकुमार गौड़, वाराणसी

तर्ज – (श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन)

जय जय करुणाकर, बाल गदाधर, रामकृष्ण भगवाना ।
अति पावन चरितं, भक्तिभावितं, नहीं स्वल्प अभिमाना ।।
अग-जग के स्वामी, अन्तर्यामी, नर-तनु धरि जब आए ।
निज शक्ति सारदा, शुभदा-वरदा, रामचन्द्र-घर लाए ।।१।।
जय परम विरागी, हरि-अनुरागी, त्यागी कंचन कामा।
भक्तन-उरवासी, जय अविनाशी परमहंस सुखधामा ।।
जय परम पुजारी, शुद्धाचारी, पूजक माँ जगदम्बा ।
अति दीन विकलता, भक्ति प्रबलता, हुई दरश-अवलम्बा ।।२।।
जय अद्‌भुत योगी, हरि-सुखभोगी, दिव्य कीर्तनानन्दा ।
अवतारवरिष्ठा, अतुलित निष्ठा, दायक परमानन्दा ।।
जय शोकविनाशक, मति-मल-नाशक, भासक दिव्य स्वरूपा ।
हे भक्तकल्पतरु, दीजै यह वरु, मिलै भक्ति सुखरूपा ।।३।।
जय नित्य, निरंजन, जन-मन-रंजन, भंजन भव-भय भारी ।
जय प्रेमस्वरूपा, दरश अनूपा, यति-मन-नन्दनकारी ।।
दायक विश्रामा, अस्त्र प्रनामा, जग-हित जो उपदेशा ।
सो मम उर-अन्तर, बसहु निरन्तर, परमहंस के वेशा ।।४।।
जय जय सुखसागर, सब गुण-आगर, सब दुर्गुण-अपहारी ।
हरिभक्ति-प्रचारक, नतजन-तारक, मानवता-उपकारी ।
जो शान्त स्वभावा, नाम-प्रभावा, बहु सद्‌गुण-विस्तारी ।
सो करहु अनुग्रह, चिद्‌घन विग्रह, भवत्रिताप-भय-हारी।।५।।
तन सत्त्वप्रधाना, हरि गुण गाना, लीन सदा, सब काला ।
बहु बार समाधी, हो निर्बाधी, अति दुर्लभ कलिकाला ।।
मन-मुख करि एका, भजन-विवेका, जो सबको उपदेशा।
सो मम उर-अन्तर, बसहु निरन्तर, परमहंस के वेशा ।।६।।
उर में हरि-ध्याना, मुख गुणगाना, तन कीर्तन-उन्मत्ता।
मन योगारुढ़ा, हरि-गुन-गूढ़ा, भगवत-प्रेमोन्मत्ता ।
लोचन हरि-लीना, ज्यों जल मीना, योगी ज्यों भगवाना ।
मुख हास विराजा, भक्त समाजा, लोचन कर मधुपाना ।।७।।
मुख छवि अति प्यारी, बनत निहारी, सारी उपमा हारी ।
श्रुति नेति निरूपा, अकथ-अनूपा, अनुभवगम्य विचारी ।।
सब इन्द्रियग्रामा, थिर अविरामा, छवि समाधि की न्यारी ।
कवि-बुद्धि-विचारी, रूप निहारी, चरनन पर बलिहारी ।।८।।
बिनु ईश्वर-ज्ञाना, सब अज्ञाना, दुखमय सब जग जाना ।
अस हृदय विचारी, भवभयहारी, विद्या-हित प्रन ठाना ।।
तब हो गए अक्षर, जदपि निरक्षर, रामकृष्ण भगवाना।
सब शास्त्रस्त्र-पुराना, वचन-प्रमाना, किए विगत अभिमाना ।।९।।
जय भवभयमोचन, तन्मय लोचन, हरिमय मन-वच-काया।
जग-शिक्षा कारन, भवदुख-टारन, कर नरचरित अमाया ।।
करि शुद्धाचारा, सब संसारा, उपदेशा अविरामा।
सो मम उर-अन्तर, बसहु निरन्तर, परमहंस सुखधामा ।।१०।।
जन-अभिमतदाता, भक्ति-प्रदाता, जय जय हरि सुखधामा।
जय रामकृष्ण प्रभु, निखिल जगत् विभु, विजयी कंचन कामा।।
हे भक्त कल्पतरु, देहु अभय-वरु, उर छवि बसै अविरामा।
मन तद्‌गतचित्ता, हो उन्मत्ता, जितै जगत-संग्रामा ।।११।।
तव अमित प्रभावा, अनुपम भावा, अनुभवगम्य, अपारा ।
हे मन-वच-गो-पर, ब्रह्म परात्पर, सकल जगत आधारा ।।
करि मति-गति-विमला, चिन्मय-अमला, भक्ति देहु सुखपुंजा।
षड्‌रिपु दुखदाई तजि अधमाई, करहिं प्रीति पदकंजा ।।१२।।
जय संशयभंजन, रतिपतिगंजन, सत्य सनातन रूपा ।
अति सरल, सुबानी, सब सुखखानी, श्रुति सिद्धान्त निरूपा ।।
जो रामचन्द्र, जो कृष्णचन्द्र, सोइ रामकृष्ण के रूपा ।
आए भूतल पर ब्रह्म परात्पर, छवि उर बसै अनूपा।।१३।।
हे विमल हंस, जग परमहंस के नाम कीर्ति तव भारी ।
कर श्री छवि-दर्शन, चरन-स्पर्शन, रहते भक्त सुखारी ।।
बहुभावसिन्धु, जग-दीनबन्धु, हे भक्तन-मति-मल-हारी ।
हे मातृभावधर, कृपा दास पर, करो मान-मद-हारी ।।१४।।
जय अनुपम साधक, हरि आराधक, निर्विकल्प पद पाई ।
करि भावमुखी मन, रहि संग भक्तन, सत्प्रसंग मन लाई ।।
अति व्याकुल-दीना, हरि-तल्लीना, जग-चर्चा न सुहाई ।
नित ईश्वरभावा, जो सुख पावा, बसै को मम उर आई ।।१५।।
जय जय जगबन्दन, अनुपम क्रंदन करि हरिदर्शन पायो ।
करके नरलीला, प्रिय सुखशीला, हरिपद भक्ति सिखायो ।।
नर चरित अपारा, कर सुखसारा, जीवन्ह को उपदेशा ।
केवल हरिज्ञाना, प्रभु-गुणगाना, मेटै जगत्-कलेशा ।।१६।।

रामनवमी विशेष

छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति में राम

डॉ. संजय अलंग

सम्भागायुक्त, बिलासपुर सम्भाग

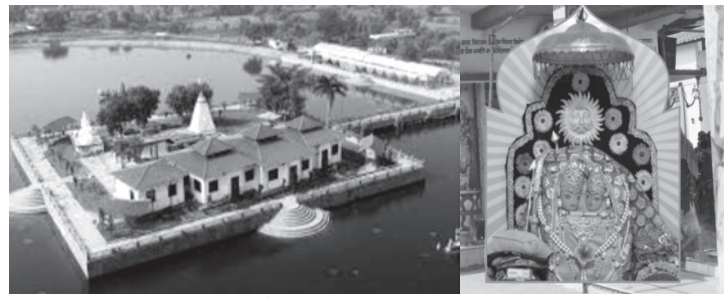

माता कौशल्या मन्दिर, चन्द्रखुरी, छ.ग.

संस्कृति हमारी प्रतिदिन की नियमित की जानेवाली प्रत्येक क्रिया या प्रतिक्रिया में परिलक्षित होती है। संस्कृति जीवन जीने की विधि है। यह वह व्यवहार निर्धारित करती है, जो हम करते हैं। यह परम्परा से पीढ़ी में हस्तान्तरित भी होती है। इसी आधार पर हम सोचते और कार्य-व्यवहार करते हैं। सभी सामाजिक घटनाएँ और व्यवहार इससे ही परिलक्षित होते हैं। यह आचरण व्यक्तिगत होते हुए भी संस्कृति तब कहलाता है, जब समाज उसमें भागीदारी करता है। यह समाज का व्यवहार निर्धारित करती है और उसे नियंत्रित कर उसमें एकरूपता लाती है।

जब वह अधिक हठ और अतिरूढ़ता पर चली जाती है और दूसरी संस्कृति के सह-अस्तित्व को अस्वीकार करने लगती है, तब कट्टरता में परिवर्तित हो जाती है। इसलिए सभ्यता को संस्कृति का अंग माना गया है और सुसंस्कृत होने को प्रधानता दी गई है, इसलिए संस्कृति में कला और रचनात्मकता को प्रमुख स्थिति प्राप्त होती है। इसीलिए असभ्यता को सुसंस्कृत नहीं कहा जाता है और कुसंस्कृति सामने आ जाती है। सुसंस्कृति का जीवन विधि में परिलक्षित होना, उस समाज को सभ्य कहलाने का कारण बनता है और मानव की समस्त उपलब्धियाँ उसकी संस्कृति से प्रेरित होती है और मानसिक पर्यावरण और पर्यावास का निर्माण कर सभ्यता का निर्माण करती है तथा सभ्यता के ही रूप में सामने आती है। संस्कृति का प्रतिबिम्ब सभ्यता है। संस्कृति का शाब्दिक अर्थ भी उत्तम या सुधरी हुई स्थिति और सभ्यता का शाब्दिक अर्थ है, जो सभा में सम्मिलित होने योग्य हो अर्थात् सामाजिक प्राणी हो।

छत्तीसगढ़ में राम – छत्तीसगढ़ की संस्कृति में राम घट-घट और कण-कण में बसे हैं। राम मर्यादित हैं और पुरुषोत्तम हैं, इस कारण से छत्तीसगढ़ भी सुसंस्कृत है। अत: छत्तीसगढ़ में सुसंस्कृत होने का भाव पारम्परिक और पीढ़ी दर पीढ़ी है। वह इसके रोम-रोम से प्रकट होता है।

छत्तीसगढ़ में राम जीवन जीने की कला और दिनचर्या का भाग हैं। छत्तीसगढ़ में राम भगवान और आराध्य तो हैं ही, पर साथ ही वे यहाँ के भांचा या भांजा भी हैं। जहाँ भी राम किसी रूप में पूजे या कथा-कहानी के रूप में जाने जाते हैं, वहाँ कहीं भी राम का यह स्वरूप नहीं है और संस्कृति में यह इस रूप में परिलक्षित होता है कि भांजे को राम का स्वरूप प्राप्त हो जाता है और उसके पैर छुए जाते हैं एवं सम्मान दिया जाता है।

यह अनायास नहीं है। महाकाव्यों में उत्तर कोसल के राजा दशरथ का विवाह एक अन्य कोसल की राजकुमारी कौशल्या से होना उल्लिखित रहा है। वह दक्षिण कोसल के राजा भानुमान की कन्या थीं, जो छत्तीसगढ़ माना जाता है। कौशल्या संज्ञा कोसल संज्ञा से ही व्युत्पन्न हुई, अन्यथा उनका नाम भानुमति था। उनका जन्मस्थल छत्तीसगढ़ के चन्दखुरी में है और यहाँ माता कौशल्या का मन्दिर है। यह राम का ननिहाल है। इस विवाह से दशरथ को इस राज्य का कुछ अंश भी उपहार में मिला और यह माना जाता है कि आगे चलकर यह भाग राम-पुत्र कुश के पास रहा और छत्तीसगढ़ के पूर्व नाम कोसल की संज्ञा को कुश की सम्बद्धता से रेखांकित किया गया। लव-कुश का जन्मस्थल और वाल्मीकि ऋषि का आश्रम छत्तीसगढ़ का तुरतुरिया नामक स्थान माना जाता है। इस प्रकार राम छत्तीसगढ़ के भांजे के रूप में स्थापित और मान्य हुए।

राम छत्तीसगढ़ में लौकिक और अलौकिक, दोनों रूपों में जनमानस में आए और लोक या जन संस्कृति में बसे और दिन का प्रारम्भ और अभिवादन ही राम-राम और जय सिया

राम के साथ होना सामान्य जीवनचर्या का अंग बन गया। राम जीवन के अन्य क्रियाकलापों और अंगों में सुसंस्कृति के साथ दृष्टिगोचर होते हैं।

नाम और संज्ञाएँ – छत्तीसगढ़ के जीवन में राम-राम के साथ अभिवादन करना तो सामान्य बात है। 'जय सिया राम' और 'जय राम जी की' भी इसमें सम्मिलित हैं। आश्चर्य भी 'हे राम' कहकर प्रकट किया जाता है। बुराई के दो बोल भी 'राम-राम' कहकर ही मर्यादित ढंग से ही सम्प्रेषित किए जाते हैं। विशेष बात सुन 'श्रीराम' कहा जाता है। मृत्यु पर 'राम नाम सत्य है' उच्चारित होता है। ये वे चीजें हैं, जो अन्य क्षेत्रों में भी हो सकती हैं।

छत्तीसगढ़ के लोक जीवन में राम और गहरे से उतरे हुए हैं। जब कोठार से पइला से नाप कर धान किसी अन्य पात्र में डाला जाता है, तो गिनती एक से प्रारम्भ नहीं होती 'राम' कहा जाता है और उसके बाद दो, तीन आदि। कोरिया-सरगुजा क्षेत्र में भिंडी को रमकेरिया कहा जाता है। राम सीता की कोमल उंगलियों से केली करते थे या प्यार से खेलते थे, उसे उपमा में उपयोग कर सीता जैसी कोमल उंगलियों जैसा भिंडी को रमकेरिया कहा गया। इसी क्षेत्र में पतले सामान्य विषहीन साँप को उसके लचक और लहरदार चाल के कारण सीता के घुँघराले केश से तुलना कर सीता की लट कहा गया।

शिवरीनारायण (जांजगीर-चांपा)

छत्तीसगढ़ में राम को आधार बना व्यक्तियों के नाम बहुत सारे हैं। जैसे – राम, रामेश्वर, सीताराम, रामनाथ, रमाधीर, रमा, रमाकान्त, रामप्यारे, रामू, रमुआ, सियाराम आदि। साथ ही नगरों और गाँवों के नाम भी राम के नाम पर हैं। जैसे - रामाराम, रामगढ़, रामपुर आदि।

पाठ – छत्तीसगढ़ में गाँव-गाँव में नवधा रामायण के रूप में रामचरित मानस से रामकथा सुनने की प्राचीन परम्परा है, जो सामान्यत: दिसम्बर-जनवरी के महीने में आयोजित की जाती है। यह परम्परा साप्ताहिक रामायण, सवनाही रामायण और नवधा रामायण के रूप में प्रचलित है। अब यह परम्परा राज्य द्वारा प्रतियोगिता के रूप में आयोजन से जनमानस में और व्यापक हो गई है।

छत्तीसगढ़ में लोक जीवन उसकी कलाओं और बोली में मुखर होकर प्रस्तुत होता है, इसमें भी राम पर्याप्त रूप से समावेशित हैं। छत्तीसगढ़ में राम मुहावरों, लोकोक्तियों, गीतों, पहेलियों, लोक-नाट्य और नृत्यों, हस्तशिल्पों आदि सभी जगह, जीवन में हैं।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ – छत्तीसगढ़ लोक जीवन में राम मुहावरों और लोकोक्तियों में सहज भाषा-सम्प्रेषण के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। जैसे – 'रोय म राम नई मिलय' अर्थात् रोने से राम नहीं मिलते या हिम्मत हारने से काम नहीं होता, 'भज मन सीता रामा – कौड़ी लगे न दामा' अर्थात् ईश्वर का नाम जपने हेतु धन या पैसा नहीं लगता, 'रखही राम त लेगही कोन – लेगही राम त राखही कोन' अर्थात् ईश्वर जिसे रखेगा, उसे कौन ले जा सकता है और जिसे ले जाना चाहे, उसे कौन रोक सकता है या जीवन और मृत्यु ईश्वर के हाथ में है, 'राम बिन दुख कोन हरे – बरखा बिन सागर कोन भरे' अर्थात् ईश्वर अगर साथ न हो, तो दुख कैसे घटेगा और बारिश न हो, तो सागर कौन भरेगा, 'रात भर रामायन पढ़िस, बिहनिया पुछिस राम सीता कोन-त भाई बहिनी, अर्थात् कार्य का उद्देश्य भूलना, 'उप्पर म राम-राम भीतर म कसई' यह मुख में राम बगल में छुरी का समानार्थी है, 'चार बेटा राम के, कौड़ी के न काम के' अर्थात् अकर्मण्य पुत्र किसी काम के नहीं, 'जिहाँ राम रामायन-तिहाँ कुकुर कटायन' अर्थात् हरि या बौद्धिक चर्चा में मूर्ख का बोलना या कुत्ते का भौंकना खल जाता है, आदि।

हस्तशिल्प – हस्तशिल्प में कोसा हेतु छत्तीसगढ़ प्रसिद्ध है। कोसा साड़ियों में पूरी रामकथा चित्रित होती है। दीवार पर भित्तिचित्रों में भी रामकथा के प्रसंग चित्रित किए जाते हैं। गुदना में राम-नाम गुदवाने की परम्परा है। एक पूरा समुदाय ही है, जो रामनामी कहलाता है और अपने पूरे शरीर पर राम का नाम गुदवाता है।

मृदा शिल्प, काष्ठ शिल्प, प्रस्तर शिल्प और धातु शिल्प में राम की मूर्तियाँ और झाँकियाँ बनाई जाती हैं। छत्तीसगढ़ का बेल मैटल और रॉट आयरन का शिल्प प्रसिद्ध है। नक्काशी और पच्चीकारी में भी रामकथा उकेरी जाती है। चित्रकला में राम के चित्र बनाए जाते हैं।

लोकगीत – छत्तीसगढ़ के लोकगीतों में राम सहज रूप से आए हैं और सांस्कृतिक समझ विकसित कर उसे

वे सुदृढ़ करते हैं। वे कृषक के रूप में भी गीतों में आते हैं। जैसे – 'राम गिस नांगर फांदे, सीता ला दिस बासी, बिन बीज के साग लान दें, हमें खाबो बासी'। राम से सम्बन्धित कई गीत हैं। सीता भी उसका आधार बनी हैं। एक छत्तीसगढ़ गीत का भाव यह है – सीताजी मन ही मन कामना करती हैं कि वे अयोध्या की बहू बनें, उनकी सरयू नदी में स्नान करने की बड़ी इच्छा है। सरयू नदी के किनारे अयोध्या नगरी स्थित है। जहाँ पर रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी रहते हैं। अयोध्या में राजा दशरथ जैसे ससुर मिलेंगे और रानी कौशल्या सास बनेगी। सुमन्त जैसे मन्त्री और भक्त हनुमान जैसे सेवक मिलेंगे। लक्ष्मण जैसे देवर मिलेंगे और स्वयं भगवान रामचन्द्रजी पति के रूप में मिलेंगे। यह गीत यह है – ''सीता जो मागे अजोधिया के राज, सरजू नहाय के बड़ आस, यहो राम सरजू ... सरजू नदी तीर अवध नगरिया, जहाँ बसे राम लखन दोनों भइया, यहो राम जहाँ बसे ... , दसरथ जइसे ससुर मिलही, रानी, कौसिल्या जस सास, यो राम रानी कौसिल्या ..., सुमन्त जइसे मंत्री मिलही, सेऊक मिले हनुमान, यहो राम सेऊक .... लछमन जइसे देवरा मिलही, पति मिले सिरी भगवान, यहो राम पति मिले ..., सीता जो मांग अजोधिया के राज, सरूज नहाय के बड़ आस।'' सीता को लेकर बने एक अन्य गीत में यह भाव है – गाँव के समीप छोटा तालाब (डबरी) है, उस पोखर (डबरी) में सीताजी स्नान करती हैं। पोखर सूख गया, सीता जी उसमें कूद गयीं अब उसमें कैसे स्नान करें? गीत यह है –

सीतामढ़ी हरचौका, जिला-कोरिया, छ.ग.

''गाँव के तीरे-तीरे नानमुन डबरी, नानमुन डबरी, सीता करई असनांदे रे भाई, सीता करई असनांदे, जय हो सीता ..., डबरी अंटईगे, सीता झपईगे, सीता झपईगे, के कइसे करंव असनांद रे भाई, कइसे करंव असनान, जय हो कइसे करंव ...। एक अन्य गीत है – कोने कोड़ावै ताले सगुरिया, ताले सगुरिया ..., कोने बंधाए ओखर पारे सजन मोर, कोने बंधाए पारे ..., रामे कोड़ाइथे ताले सगुरिया, ताले सगुरिया ..., लखन बंधावै ओखर पारे सजन मोर, लखन बंधावे ओखर पारे ..., कोने लगाइथे लख अमरइया, लख अमरइया ..., कोने हवय पखवारे सृजन मोरे कोने हवय रखवारे ..., रामे लगइथे लख अमरइया, लख अमरइया..., लखन हवय रखवारे सजन मोरे, लखन हवय रखवारे...। इस गीत का भाव यह है कि किसने तालाब खोदवाया और किसने उस तालाब के तट बँधवाये? रामजी ने तालाब खोदवाये, लखनलालजी ने तालाब के तट बँधवाये। उस तालाब के तट पर किसने आम के लाख वृक्ष लगवाये और कौन उनकी रखवाली कर रहे हैं? भगवान राम जी ने आम के लाख वृक्ष लगवाये और उसकी रखवाली लखनलाल जी कर रहे हैं।

पहेलियाँ – राम छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति में गहरे से समाहित हैं। इस कारण से उन पर आधारित पहेलियाँ भी बनी हैं। इन पहेलियों का आधार रामकथा है। छत्तीसगढ़ी की एक पहेली से रामकथा के प्रचलित ग्रन्थ रामचरितमानस का उल्लेख एक पेड़ के रूप में हुआ है, उसकी शाखाओं में लगने वाले फलों के स्वाद को मानस के रसास्वादन से होनेवाला आत्मशान्ति का पर्याय बताया गया है – 'एक पिंहड़न मोल, सबमें अलग-अलग डारा, सब मा फर लगिस त सब मा अलग-अलग सुवाद।' सीता के वनवास और कुश-जन्म को लेकर पहेली खूब प्रसिद्ध भी है। यह इस प्रकार है – 'निरसंखी को संसो भयो, बिना बाप के पूत, उहू पूत कब? माता नी रहिस तब।' यह उस घटना या कथा को इंगित करती है, जिसमें कुश के जन्म की लोक कथा है, जिसमें बताया गया है कि राम द्वारा त्यागे जाने के उपरान्त दोबारा वनवासी हुई सीता लव को ऋषि वाल्मीकि के पास सुला कर नदी गईं। वहाँ एक बन्दरिया अपने बच्चे को छाती से चिपकाकर ऊँची फुनगियों पर कूद रही है। वह उसे मनाकर घर छोड़ आने को कहती हैं। वह उत्तर देती है और आंशका करती है कि कहीं कोई हिंसक पशु उसे वहाँ से न उठा ले। यह सुन, सीता लव हेतु भी आशंकित हो जाती हैं। वह तत्काल आश्रम लौट लव को साथ ले आती हैं, पर वाल्मीकि तब नींद की झपकी में होते हैं। जागने पर लव को न पा, डर और आंशका में कल्मष से शिशु मूर्ति बना अपनी मंत्र-साधना से कुश को जल सिंचित कर प्राणवान कर देते हैं। स्नानोपरान्त लव के साथ लौटने पर कुश को देख आश्चर्यचकित सीता को ऋषि द्वारा सब वृतान्त पता चलने पर वे कुश को भी अपना पुत्र मान लेती हैं। यह तथ्य ही इस पहेली में आया

है। एक अन्य पहेली में राम के वनगमन पर भी प्रश्न किया गया है। यह है – 'राज पूछही तब बताही का, एक अंधेर कबले चलिही, जबले चलिही तबले चलिही, नई चलिही त अप घर चल दिही।' राम को वनवास हेतु छोड़ने गए सुमन्त से प्रश्न कर, कैकई और दशरथ पर भी आक्षेप है। रावण के विषय में इस तरह से पूछा गया है – 'खटिया गांथे तान-बितान, तू सुतईया बाईस कान।' यह पहेली दस शीश और बीस कान को आधार बनाती है। 'राम-रावण-युद्ध इस तरह पहेली में आता है – जनमति टुरा के लागे हे टोपी, राम मारिन रावण ला उही म, किरिस्नमोहिन गोपी ल उही म, भात खाएन आज हमन उही म।' यह बुराई पर अच्छाई की विजय को बताने के लिये पूछी जाती है। पवन और अंजनी के अविवाहित संसर्ग से हनुमान के जन्म को पूछने के लिए यह छत्तीसगढ़ी पहेली है – 'बाप कुंआरा, बेटा कुँआरा, अऊ कुंआरी महतारी, कोरा म लइका होवय, बताओ न वेदाचारी।'

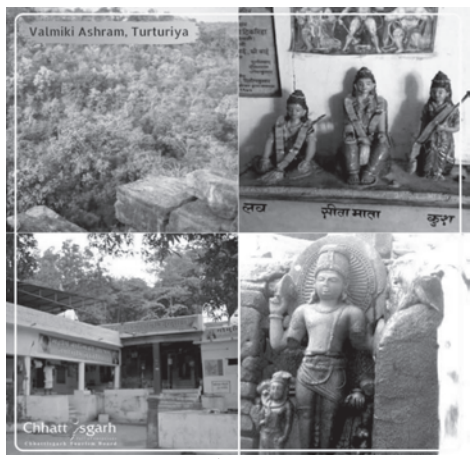

तुरतुरिया (बलौदाबाजार-भाटापारा)

वनगमन पथ, निवास और कार्यस्थल – छत्तीसगढ़ का पूर्व नाम दक्षिण कोसल रहा है। यह नर्मदा के दक्षिण में होने के कारण भौगोलिक रूप से भारत के दक्षिण का भाग है, पर बहुत स्पष्ट रूप से उत्तर और दक्षिण को जोड़ने की भूमि होने के कारण दक्षिणापथ की संज्ञा इसे मिली। इस विशेष भौगोलिक स्थिति के कारण यह राम का ननिहाल होने के साथ उनके वनवास काल में उनके रहवास और गमन का पथ रहा। चंदखुरी, आरंग को माता कौशल्या की जन्मभूमि और राम का ननिहाल माना जाता है। छत्तीसगढ़ राम की कर्मभूमि है। चौदह वर्ष के कठिन वनवास काल के दौरान अयोध्या से प्रयागराज, चित्रकूट, सतना गमन करते हुए, राम ने दक्षिण कोसल अर्थात् छत्तीसगढ़ के भरतपुर पहुँचकर मवई पारकर दण्डकारण्य में प्रवेश किया। मवई नदी के तट पर बने प्राकृतिक गुफा मन्दिर, सीतामढ़ी-हरचौका में पहुँचकर उन्होंने विश्राम किया। इस तरह राम के वनवास काल का छत्तीसगढ़ से पहला पड़ाव भरतपुर के पास सीतामढ़ी-हरचौका को माना जाता है।

राम ने छत्तीसगढ़ में वनगमन के दौरान लगभग ७५ स्थलों का भ्रमण किया। इनमें से ६५ स्थल ऐसे हैं, जहाँ सियाराम ने लक्ष्मणजी के साथ रुककर कुछ समय व्यतीत किया था। छत्तीसढ़ में इन स्थानों को चिह्नित और विकसित भी किया गया है। कोरिया से लेकर सुकमा तक राम वनगमन मार्ग में अनेक स्थान हैं। यह राम वन-गमन मार्ग पर्यटन-परिपथ के रूप में विकसित हो रहा है। प्रथम चरण में सीतामढ़ी-हरचौका (कोरिया), रामगढ़ (सरगुजा) शिवरीनारायण (जांजगीर-चांपा), तुरतुरिया (बलौदाबाजार-भाटापारा), चन्द्रखुरी (रायपुर), राजिम (गरियाबंद), सप्तऋषि आश्रम सिहावा (धमतरी), जगदलपुर और रामाराम (सुकमा) को विकसित किया जा रहा है।

कोरिया जिले का सीतामढ़ी राम के वनवास-काल का पहला पड़ाव माना जाता है। नदी के किनारे इस स्थान पर गुफाओं में सत्रह कक्ष हैं, जो सीता की रसोई के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। यहीं पर अत्रि मुनि के आश्रम में माता अनुसुईया ने सीता को नारी धर्म का ज्ञान दिया था, इसलिये इस क्षेत्र को सीतामढ़ी के नाम से जाना जाता है। पौराणिक और ऐतिहासिक ग्रंथों में रामगिरि पर्वत का उल्लेख आता है। सरगुजा जिले का यही रामगिरि-रामगढ़ पर्वत है। यहाँ स्थित सीताबेंगरा-जोगीमारा गुफा की रंगशाला को विश्व की सबसे प्राचीन रंगशाला माना जाता है। मान्यता है कि वन-गमन काल में रामचन्द्रजी के साथ सीताजी ने यहाँ कुछ समय व्यतीत किया था, इसीलिए इस गुफा का नाम सीताबेंगरा पड़ा। जांजगीर-चांपा जिले में प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण शिवनाथ, जोंक और महानदी का त्रिवेणी संगम स्थल शिवरीनारायण है। इस विष्णुकांक्षी तीर्थ का सम्बन्ध शबरी और नारायण से होने के कारण इसे शबरी नारायण या शिवरीनारायण कहा जाता है। यह मान्यता है कि इसी स्थान पर माता शबरी ने वात्सल्यवश बेर चखकर मीठे बेर रामचन्द्रजी को खिलाए थे। यहाँ नर-नारायण और माता शबरी का मन्दिर है, जिसके पास एक ऐसा वट वृक्ष है, जिसके पत्ते दोने के आकार के हैं। जिले में सघन वन क्षेत्र से घिरा बालमदेवी नदी तट पर बसा तुरतुरिया छोटा-सा ग्राम

है। जनश्रुति के अनुसार महर्षि वाल्मीकि का आश्रम यहीं था और तुरतुरिया ही लव-कुश की जन्मस्थली है। यहाँ पर नदी का पानी प्राकृतिक चट्टानों से होकर तुरतुर की ध्वनि के साथ प्रवाहित होता है, जिससे इस स्थान का नाम तुरतुरिया पड़ा। चन्द्रवंशीय राजाओं के नाम से चन्द्रपुरी कहलाने वाला ग्राम चंदखुरी माता कौशल्या की जन्मस्थली और मर्यादा पुरुषोत्तम राम का ननिहाल है। राजधानी रायपुर से २७ किलोमीटर की दूरी पर १२६ तालाबों वाले इस गाँव में जलसेन तालाब के बीच में भारत का एकमात्र माता कौशल्या का ऐतिहासिक मन्दिर-स्थल है। पुत्र रामचन्द्र को गोद में लिये हुए माता कौशल्या की अद्‌भुत प्रतिमा इस मन्दिर को दुलर्भ बनाती है।

सप्तऋषि आश्रम सिहावा (धमतरी)

अपने वनवास काल में सियाराम ने आरंग से नदी मार्ग से चम्पारण्य और फिर महानदी जल मार्ग से राजिम में प्रवेश किया। महानदी, सोण्ढूर और पैरी नदी के संगम के कारण छत्तीसगढ़ का प्रयागराज माना जानेवाला राजिम प्राचीन समय में कमल क्षेत्र पद्मावतीपुर था। वन गमन के समय रामचन्द्रजी ने लोमश ऋषि आश्रम में कुछ समय व्यतीत किया था। यहाँ से सिया-राम ने लक्ष्मणजी के साथ कुलेश्वर महादेव के दर्शन कर पंचकोशी की यात्रा की थी।

राजिम (गरियाबंद)

धमतरी में घने जंगलों और पहाड़ियों से घिरा हुआ पवित्र स्थल सिहावा है। छत्तीसगढ़ की जीवनदायिनी पौराणिक महानदी का ये उद्‌गम क्षेत्र है। शृंगी ऋषि का आश्रम होने के कारण इसे सिहावा कहा जाता है। मान्यता है कि राजा दशरथ ने पुत्र-प्राप्ति के लिये सिहावा से शृंगी ऋषि को पुत्रेष्टि यज्ञ के लिए अयोध्या आमन्त्रित किया था और उसी यज्ञ के फलस्वरूप राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न का जन्म हुआ। वनगमन करते हुए प्रभु श्रीराम नारायणपाल से इन्द्रावती नदी मार्ग से दण्डकारण्य के प्रमुख केन्द्र जगदलपुर पहुँचे। राम-वनगमन का बस्तर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण पड़ाव चित्रकोट को माना जाता है। इन्द्रावती से गिरते हुए जलप्रपात के प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण सिया-राम का यह रमणीय स्थान रहा है। मान्यता है कि इसी स्थान पर राम से मिलने हिमगिरी पर्वत से भगवान शिव-पार्वती आए थे। दण्डकारण्य क्षेत्र में भ्रमण करते हुए रामचन्द्र दक्षिणापथ जाते समय कोटम्बसर से आगे नदी मार्ग से सुकमा होकर ऐसे स्थान पहुँचे, जो उनके नाम से ही जाना जाता है। इस पवित्र स्थल का नाम रामाराम है। इसी के पास पहाड़ी पर राम के पद चिह्न होने की किंवदन्ती है। यह भी जनश्रुति है कि यहाँ पर भगवान राम ने भू-देवी की पूजा की थी। रामाराम में प्रसिद्ध चिटमिट्टीन देवी का मन्दिर है। रामनवमी के दिन रामाराम में विशाल मेला लगता है।

छत्तीसगढ़ राम की कर्मस्थली के साथ उनके जीवन-संघर्ष का साक्षी भी है। इसलिए राम छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक प्रतीक भी बन जाते हैं। ○○○

(छत्तीसगढ़ जनमन, मई २०२३ से साभार)

कविता

अवधेश्वर प्रभु हरे हरे

डॉ. अनिल कुमार 'फतेहपुरी'

दशरथ प्रिय नन्दन, असुर निकंदन,
अवधेश्वर प्रभु हरे हरे !
मुनि कष्ट निवारक, अहिल्या तारक,
सर्वेश्वर प्रभु हरे हरे !
शिव धनुष विदारक, सिय दुःख हारक,
सीतेश्वर प्रभु हरे हरे !
शुभ रघुकुल केतु, सब जग हेतु,
जगदीश्वर प्रभु हर हरे !
देवत्व प्रचारक, दनुज संहारक,
परमेश्वर प्रभु हरे हरे !
जय सज्जन रक्षक, दुर्जन भक्षक,
अनिलेश्वर प्रभु हरे हरे ।

रामनवमी विशेष

मानवीय आदर्शों के प्रतिमान भगवान राम

डॉ. रमेश चन्द्र नैनवाल

सहायकाचार्य, वैदिक एवं संस्कृत विभाग,

बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ

किसी भी व्यक्ति की पूर्णता का बोध उसके जीवन के कृत व्यवहार के अन्वेषण से ही होता है। इस दृष्टि से भगवान राम का सम्पूर्ण चरित्र वर्तमान समय में भी जीवन के सभी क्षेत्रों में अतुलनीय है। भगवान राम ने लोकतन्त्र के मानकों को स्वयं गढ़ा है, उनके लिए प्रजा प्रधान तो है, लेकिन उससे ऊपर नीति है। नीति से भगवान राम कभी समझौता नहीं करते। वनवास के समय सभी अयोध्यावासी राम की वापसी चाहते थे, लेकिन वहाँ राम ने जनमत नहीं, अपितु नीति को महत्त्वपूर्ण माना। शत्रु से भी वैर किस स्तर तक हो, इसको भी भगवान राम अपने आदर्श व्यवहार से प्रस्तुत करते हैं। एक आदर्श नायक कैसा होना चाहिए, उसके सभी गुण राम में विद्यमान हैं। रामायण ग्रन्थ में वाल्मीकि नारदजी से इस संसार के सर्वश्रेष्ठ गुणवान मनुष्य के बारे पूछते हैं कि कौन मनुष्य इस लोक में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवक्ता, दृढ़प्रतिज्ञ, सदाचारपरायण, सबका हितकारी, विद्वान, सामर्थ्यवान, क्रोधरहित, ईर्ष्यारहित इत्यादि गुणों से युक्त है। इसके उत्तर में मुनि नारद इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न भगवान राम के बारे में बताते हैं, जो उपरोक्त सभी गुणों से युक्त हैं। रामायण में भगवान राम के जीवन में इन सभी गुणों का सजीव वर्णन मिलता है। रावण के वध के अनन्तर उसके मृत शरीर को देखकर राम विभीषण से कहते हैं कि मरण के बाद रावण से मेरा बैर समाप्त हो गया है, इसलिए आप इसका अन्तिम संस्कार कीजिए, जैसा यह आपका भाई है, उसी प्रकार यह मेरा भी भाई है।

प्राचीन भारतीय परम्परा में धर्म को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। राम से पूर्व धर्म की व्याख्या भिन्न-भिन्न है, लेकिन राम के साथ धर्म क्रिया योग बन गया। जहाँ मनुष्य होते हुए भी उर्ध्व यात्रा सम्भव है। पुत्रधर्म, भ्रातृधर्म, सखाधर्म, पतिधर्म, समाजधर्म, योद्धाधर्म, शरणागतिधर्म इत्यादि नवीन अवधारणाओं को राम अपने व्यवहार से प्रतिष्ठापित करते हैं। अत: धर्म की जितनी व्याख्याएँ हो सकती हैं, सब राम में निहित हैं, क्योंकि राम का चरित्र एवं धर्म पर्यायवाची है। अतएव वाल्मीकि कहते हैं कि 'रामो विग्रहवान धर्म:'।

भगवान राम में एक आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श राजा तथा आदर्श मनुष्य के सभी गुण विद्यमान हैं। पिता की आज्ञा स्वीकारना, भाई भरत को राजगद्दी मिलने पर भी उद्वेलित न होना, लक्ष्मण की मूर्च्छा के समय सभी कर्तव्य निभाना, पत्नी सीता के जीवन के प्रतिक्षण एकमात्र साथी, प्रजापालन की दृष्टि से एक उत्कृष्ट राजा तथा राजा होते हुए प्रजा जैसा ही जीवन उनकी अपनी पहचान है। सीता-हरण के अनन्तर सीता को अन्वेषण के क्रम में वन-वन घूमते हुए एक प्रेमी राम की स्थिति को लक्ष्मण के मुँह से कवि भवभूति प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि – **'अपि ग्रावा रोदिष्यति दलति वज्रस्य हृदयम्'। (उत्तररामचरितम्)** अर्थात् राम की विह्वल स्थिति को देखकर पत्थर भी रोने लगे और कठोर वज्र का हृदय भी गल जाए। वहीं राजा राम के लिये राज्य-निर्वहण का कर्तव्य अपने सभी कार्यों से श्रेष्ठ है, इसका वर्णन करते हुए भवभूति कहते हैं – **'स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि। आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।। (उत्तररामचरितम्)** अर्थात् प्रजापालन के लिये मैं अपने स्नेह, दया, सुख को भी छोड़ सकता हूँ तथा आवश्यकता पड़ने पर सीता का परित्याग भी राम को व्यथित नहीं कर सकता।

प्रत्येक काल खण्ड में समाज को एक आदर्श नायक

की आवश्यकता होती है, जो सभी गुणों का आश्रय होता है। भगवान राम में वे सभी आदर्श विद्यमान हैं, जो उन्हें देश-विशेष की सीमाओं से अतिक्रमित कर विश्वव्यापी, सार्वजनीन, सर्वकालिक बनाता है। आज राम-आदर्श श्रीमद्भगवद्गीता में लिखित उन महावाक्यों के समान है, जिन्हें पढ़ने पर सर्वदा नवीन अर्थ की प्रतीति होती है। भगवान राम के ये आदर्श ही सम्पूर्ण विश्व में विविध रामायण संस्कृति के माध्यम से फैले हुए हैं। वर्तमान में पुन: यही सांस्कृतिक सम्बन्ध विश्व में भारत को नवीन ऊँचाइयों तक ले जायेंगे। भगवान राम के विविध आदर्श के कारण ही अयोध्या सात्त्विक शक्तियों का प्रतीक है, इसके विपरीत लंका आसुरी शक्तियों का। अतएव अयोध्या को वर्तमान में अयोध्या तीर्थ में निर्मित भव्य राम मन्दिर मात्र एक देवालय न होकर भगवान के सम्पूर्ण चरित्र को प्रस्तुत कर रहा है।

यह राममन्दिर उत्तर से दक्षिण पुन: भारत को एकसूत्रता में कठोरता से बाँधेगा। यही नहीं, इस मन्दिर के निर्माण में भी पूरे भारतवर्ष के रामभक्तों के परिश्रम एवं सहयोग का योगदान है। जो व्यक्ति जिस प्रकार भी तन-मन-धन से सहयोग कर सकता था, सभी ने अपना यथेच्छा सहयोग प्रदान किया। इस भव्यनिर्माण को बनाने में प्राचीन शास्त्रों की सहायता ली जा रही है, जिससे इन शास्त्रों के प्रति समाज की रुचि पुन: जागृत होगी। वर्तमान मन्दिर प्राचीन भारतीय वास्तुकला, शिल्पकला, मूर्तिकला इत्यादि के पुनर्जागरण में भी अत्यन्त सहयोगी होगा। वर्तमान में अडानी ग्रुप ने भी प्राच्यविद्या जैसे क्षेत्रों में शोध हेतु सहयोग का आश्वासन दिया है।

प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी जी ने राम-मन्दिर से राष्ट्रोत्कर्ष को परिभाषित करते हुए कहा कि **राम-मन्दिर देश से देव एवं राम से राष्ट्र की यात्रा है। भविष्य में रामनीति ही राष्ट्रनीति होगी। राममन्दिर मन्दिर मात्र नहीं, यह विश्व को मानवता का अनुपम उदाहरण है।** विस्तारवाद एवं सम्पूर्ण विश्व में बढ़ते कट्टरवाद के विरुद्ध एक विकल्प राम मन्दिर प्रस्तुत करता है। यह सभ्यता के उन्नयन का अनूठा एवं एकमात्र मार्ग है। पूरे विश्व में बढ़ते युद्धों के मध्य विविध देशों में भारतीय संस्कृति के प्रचारित-प्रसारित होने से अनेकों मन्दिरों का निर्माण हो रहा है, जो राममन्दिर के आगमन की बसन्त ऋतु है। युवाओं में राम के विषय में जानने एवं अन्वेषण की प्रवृत्ति बढ़ी है, गीता प्रेस, गोरखपुर से रामचरितमानस की सर्वाधिक प्रति इस समय विक्रय हुई है, जो अन्य पुस्तकों से कहीं अधिक है। जिस प्रकार भगवान राम ने अधर्म के नाश के लिये सम्पूर्ण मानव समाज को उसके प्रति सचेत करते हुये, स्वयं उनके माध्यम से ही उस बुराई का संहार किया, उसी प्रकार वर्तमान समाज भी समयानुरूप समाज में जन्मी समस्याओं का निदान भी भगवान राम के आदर्शों को अनुसरण करते हुए कर सकता है तथा पुन: रामराज्य की स्थापना में अपना सहयोग प्रदान कर सकता है। अत: भगवान राम के आदर्श पुन: विश्व को एक सरलतम, निर्विरोधी एवं आदर्श मार्ग प्रशस्त करने की ओर अग्रसरित हो, यही प्रार्थना है। ○○○

कविता

धरती पर लो अवतार राम

गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र', लखनऊ

हे ईश्वर! प्राणाधार राम ।
विनती कर लो, स्वीकार राम ।
कुछ ज्ञात न आदि, न मध्य-अन्त,
जीवन-क्षण के विस्तार राम ।।

सर्वत्र समान रम रहा जो,
वह निराकार-साकार राम ।
जिस नाम से पत्थर तैर गए,
वह शब्द-शक्ति-भंडार राम ।।

दुख-सागर में अवलम्ब तुम्हीं,
मेरे तन-मन, संसार राम ।
पूजा, जप, तप, हठयोग, यज्ञ,
हो भक्ति-मुक्ति के सार राम ।।

अंशज-वंशज सब दीन-दुखी,
सुखनिधि कर दो उद्धार राम ।
प्रभु रोम-श्वास में बस जाओ,
कर दो सुशान्ति, संचार राम ।।

चहुँ दिश अशान्ति, बढ़ गए पाप,
धरती पर लो अवतार राम ।
एक-सा प्रभावी नाम-रूप,
पावन 'विनम्र' उद्गार राम ।।

श्रीरामकृष्ण-गीता (४५)

(आठवाँ अध्याय ८/८)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

कीदृश एष संसारोऽसार आम्रातको यथा।
उदरस्थेऽम्लशूलः स्यात् त्वगष्ठिरे केवलम्।।४९।

– यह संसार कैसा है? जैसे आमड़ा है। केवल अठुली और छिलका है, खाने पर अम्लशूल होता है।

तैलेन मृज्यते हस्तो विभेत्तुं पणसं यथा।
ततोऽस्य श्याननिर्यासः करतलं न संजयेत्।।५०।

– जिस प्रकार कटहल काटने के पहले हाथ में तेल लगा लेते हैं, इससे हाथ में कटहल का लासा नहीं लगता है।

प्रपंचपणसो भोग्यो ज्ञानस्नेहविलेपनैः।
काम-कांचनरूपोऽस्य रसो न संजयेन्मनः।।५१।।

– उसी प्रकार यदि संसार रूपी कटहल को ज्ञान रूपी तेल लगाकर भोग किया जाय, तो कामिनी-कांचन रूपी लासा का दाग मन में नहीं लग सकेगा।

दशत्यह्नाय सर्पस्तं चेतसो केनचिद्वृतः।
यो व्यालमन्त्रवित् सम्यक् शक्नोति स हि केवलम्।।५२।
सुखं दर्शयितुं खेलं सप्ताहिगललम्बितः।
तद्वद्विवेकवैराग्य-मन्त्रज्ञान-विशारदः।।५३।।
सन्नहितुण्डिका यद्वत् संसारस्तु करोति चेत्।
वन्थुमर्हति तं नैव माया ममत्वमैहिकम्।।५४।।

– साँप को यदि कोई पकड़ना चाहे, तो वह उसी समय उसे काट लेगा। किन्तु जो व्यक्ति ठीक-ठीक साँप का मन्त्र जानता है, तो वह सात साँप को गले में डालकर प्रसन्नता से खेल दिखा सकता है। उसी प्रकार विवेक-वैराग्य रूपी मन्त्र को सीखकर यदि कोई संसार में रहे, तो उसे सांसारिक माया-ममता आबद्ध नहीं कर सकती।

भावनं त्वन्तरे यादृग वचनैस्तत् प्रकाशितम्।
उद्गारे मूलगन्धः स्यात् यथैव मूलभक्षणे।।५५।

– जिसके अन्दर जो भाव रहता है, वह उसकी बातचीत से बाहर आ जाता है। जैसे मूली खाने से डकार में मूली की ही गन्ध निकलती है। **(क्रमशः)**

किसी भक्त को एक आत्मीय पर अत्यधिक आसक्ति के कारण मन को स्थिर करने में असमर्थ देख श्रीरामकृष्ण ने उसे अपने प्रेमपात्र को ईश्वर का ही रूप मानते हुए भगवद्भाव से उसकी सेवा करने का उपदेश दिया। इस विषय को समझाते हुए कभी-कभी श्रीरामकृष्ण पण्डित वैष्णवचरण के ऐसे ही दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए कहते, ''वैष्णवचरण कहता था, 'यदि अपने प्रेमास्पद को इष्टदेवता के रूप में देखा जाए, तो मन बड़ी सरलता से भगवान की ओर चला जाता है।' ''

भागवत, भक्त और भगवान तीनों एक ही हैं।

– श्रीरामकृष्ण देव (अमृतवाणी)

कविता

हमारे इष्ट श्रीगणेश

सोनल मंजु श्री ओमर, राजकोट, गुजरात

हमारे इष्ट श्री गणेश प्रथम पूज्य आप हैं ।
दूर करते सभी विघ्न, क्लेश, सन्ताप हैं ।।
एकदन्त, सुन्दर आनन, मोदकप्रिय आप हैं ।
माता पार्वती, पिता महादेव नन्दन आप हैं ।।
पधारे रिद्धी सिद्धी पत्नियों संग आप हैं ।
शुभ-लाभ के पिता जगत-पालक आप हैं ।।
गजकर्ण में व्याप्त वैदिक ज्ञान भी आप हैं ।
सूंड में धर्म और आँखों का लक्ष्य आप हैं ।।
बाएँ हाथ का अन्न, दाएँ का वरदान आप हैं ।
पेट में सुख-समृद्धि नाभि का ब्रह्माण्ड आप हैं ।।
मस्तक में ब्रह्मलोक चरणों में सप्तलोक आप हैं ।
भक्तों को प्रदान करते सुख, समृद्धि, प्रताप हैं ।।
सुखकर्ता, दुखहर्ता, विघ्न विनाशक आप हैं ।
संसार के दूर करते आप सभी अनिष्ट, पाप हैं ।।

स्वामी ब्रह्मानन्द और भुवनेश्वर

स्वामी तन्निष्ठानन्द

रामकृष्ण मठ, नागपुर

(गतांक से आगे)

ओडिशा की अन्तिम यात्रा : १ अप्रैल, १९२१ को महाराज महापुरुष महाराज तथा अन्य साधु-संन्यासियों और ब्रह्मचारियों के साथ हावड़ा-पुरी एक्सप्रेस से भुवनेश्वर पधारे। वे अगले दिन सुबह भुवनेश्वर पहुँचे। १५ अप्रैल, १९२१ को भुवनेश्वर में लिंगराज मन्दिर का रथयात्रा उत्सव था। इसमें सभी ने भाग लिया। महापुरुष महाराज के साथ महाराज १८ अप्रैल, १९२१ को दक्षिण भारत की यात्रा पर गए और २१ नवम्बर, १९२१ की मध्यरात्रि को भुवनेश्वर लौट आए। महाराज सात महीने तक दक्षिण भारत में विभिन्न स्थानों पर रहे। उनकी उपस्थिति में वहाँ की आध्यात्मिकता के स्तर में काफी बढ़ोतरी हुई। दक्षिण भारत की उनकी तीसरी और अन्तिम यात्रा में वहाँ के साधु-संन्यासियों और भक्तों ने महाराज की आध्यात्मिक शक्ति के उच्चतम स्तर का प्रकटीकरण अनुभव किया। भुवनेश्वर लौटने के बाद सेवकों ने महाराज को अधिक अन्तर्मुखी पाया। वे बाहरी परिवेश से बेसुध मठ परिसर में ही टहलते। इस दौरान उन्होंने महापुरुष महाराज से दो बार कहा, 'तारकदा अब आप लोगों को ही संघ की जिम्मेदारी सम्हालनी होगी, अब मैं एक जगह शान्ति से रहना चाहता हूँ।'

एक दिन भुवनेश्वर मठ में सीढ़ियों के पास छत पर रामलाल दादा ने दुखी होकर राजा महाराज से कहा, 'श्रीरामकृष्ण के सान्निध्य में आप लोगों ने कितनी साधना की है। लेकिन आजकल हम नए साधुओं में ऐसी तीव्रता नहीं देखते।' इसपर महाराज ने कहा, 'देखो रामलाल दादा, ये लड़के आध्यात्मिक जीवन में उन्नति के लिए कितना संघर्ष कर रहे हैं। जितना संघर्ष वे करते हैं, उतना ही विरोध उन्हें स्थूल और सूक्ष्म जगत से झेलना पड़ता है। यदि वे श्रीरामकृष्ण का नाम जप सकें, तो ठाकुर की कृपा से उन्हें आध्यात्मिक जीवन में सब कुछ मिल जाएगा।'

एक दिन महाराज भुवनेश्वर मठ में रामलाल दादा के साथ हॉल में बैठे थे। महाराज ने एक साधु से कहा, 'देखो, गुरु की कृपा से तुम्हें सब कुछ मिल जाएगा, लेकिन यदि तुम

इसी जीवन में ईश्वर को प्राप्त करना चाहते हो, तो तुम्हें पूरी विनम्रता के साथ उनसे प्रार्थना करनी होगी।'[५४]

स्वामी काशीश्वरानन्द ने अपने संस्मरणों में लिखा है: संघ के एक संन्यासी पंजाब की यात्रा कर भुवनेश्वर मठ में आए थे। वह नवम्बर, १९२१ का महीना था। महाराज, महापुरुष महाराज और संभवत: रामलाल दादा तब भुवनेश्वर मठ में थे। उस समय मन्दिर भूतल पर स्थित था। उस शाम महाराज हॉल में साधु तथा भक्तों के बीच बैठे थे। महाराज बड़े स्नेहपूर्वक एक साधु को मनाने की कोशिश कर रहे थे कि वह भुवनेश्वर मठ का त्याग न करे। सभी उसे मनाने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन उस साधु ने किसी की एक न सुनी। अन्त में महाराज ने उस साधु से कहा, 'तुम क्या चाहते हो? क्या तुम एकान्त में साधना करना चाहते हो? ठीक है, मैं तुम्हारे लिए एक अलग कुटिया की व्यवस्था करूँगा और वहाँ तुम्हारे लिए भोजन की व्यवस्था करूँगा। पर मैं तुम्हे अनुनय करता हूँ कि कृपया तुम यह स्थान न छोड़ो।' वहाँ उपस्थित सभी लोग महाराज की कातरता देख

बहुत प्रभावित हुए, लेकिन उस साधु ने महाराज की एक न सुनी। आधे घंटे तक उसे समझाने पर भी वह साधु अपने जिद पर अड़ा रहा। अन्त में महाराज ने उसे कहा, 'देखो बेटा, मनुष्य असहाय होता है। क्या अपनी सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं या क्या सभी पवित्र जीवन जी सकते है? संसार में बहुत सारी अनिष्ट प्रवृत्तियाँ हैं।' इतना कहकर महाराज गंभीर और मौन हो गये। महापुरुष महाराज, जो यह सब सुन रहे थे, उस साधु से बोले, 'तुमने महाराज का कहना नहीं माना, तुम्हें जल्द ही अपनी मूर्खता का बोध होगा।' भुवनेश्वर मठ से जाने के तुरन्त बाद उस साधु का पतन हुआ और उसे संघ से निष्कासित किया गया।

स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज

स्वामी काशीश्वरानन्द ने अपने संस्मरणों में लिखा हैं – श्रीश्री जगन्नाथदेव के महाप्रसाद के प्रति महाराज की कितनी असाधारण भक्ति थी। एक बार मैंने उनसे कहा कि मैं भुवनेश्वर से पुरी जा रहा हूँ। इस पर उन्होंने मुझसे कहा, 'अच्छा है। कृपया मेरे लिए थोड़ा जगन्नाथजी का महाप्रसाद लाना।' यथा समय मैं उनके लिए महाप्रसाद ले आया। वे कितने खुश हुए! बाद में उनके सेवकों ने मुझे बताया, 'जब आपकी ट्रेन आनेवाली थी, तो वे रेलवे लाईन को देखते देखते बेचैन हो गये थे। वे ट्रेन और महाप्रसाद के आने की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे।'[५५]

महाराज जब भुवनेश्वर मठ में थे, तब वहाँ एक महिला सफाई का काम करती थी। जब वह लोगों को ठाकुर के दर्शन के लिए मन्दिर जाते देखती, तो उसके मन में भी ठाकुर के दर्शन की इच्छा उत्पन्न हुई। वह महाराज के पास अनुमति लेने गई और उनसे पूछा, 'क्या मुझे मन्दिर में जाकर ठाकुर के दर्शन करने का अधिकार है?' महाराज प्रसन्न हुए और बोले, 'क्यों नहीं? यह साबुन लो, स्नान करो, स्वच्छ वस्त्र पहनो और ठाकुर के दर्शन के लिए जाओ।' उसने वैसा ही किया। जब उसके समाज के लोगों को यह बात पता चली, तो उन्होंने उसे बहुत-सी बातें कहकर डरा दिया। वह चिन्तित होकर महाराज के पास गई और उन्हें सारी बातें बताई। महाराज ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा, 'तुम्हें डरने की आवश्यकता नहीं है। ठाकुर दयालु हैं और सभी पर अपनी कृपा की वर्षा करते हैं।'

भुवनेश्वर मठ महाराज का सबसे प्रिय स्थान था। वे चाहते थे कि यह मठ तपस्या का स्थान बने। वे यहाँ विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाना चाहते थे। वे चाहते थे कि यहाँ एक गाय हो और साधना के लिए एक कुटिया हो। उन्हें सीताफल बहुत पसंद था। भुवनेश्वर मठ सीताफल के पेड़ों से घिरा हुआ था।

उनके गुरुभाइयों के अनुसार, पीछे से देखने पर महाराज हूबहू श्रीरामकृष्ण जैसे दिखते थे। अप्रैल, १९२० में भुवनेश्वर मठ में उनकी तस्वीर पीछे से ली गई। एक दिन जब महाराज टहल रहे थे, हरि महाराज ने उन्हें पीछे से देखा और उन्हें श्रीरामकृष्ण समझ लिया। जब वे पास आए तो उन्होंने पाया कि वे राजा महाराज थे, जो काफी उँचे और स्वस्थ थे।[५६]

सत्येन्द्रनाथ मजूमदार कलकत्ता से भुवनेश्वर की यात्रा पर आए थे। कुछ दिनों तक भुवनेश्वर में रहने के बाद, जब वे पुरी जाने के लिए तैयार हो रहे थे, स्वामी ब्रह्मानन्द ने उन्हें पुरी न जाकर वापस कलकत्ता लौटने के लिए कहा। श्री मजूमदार ने महाराज से कहा कि वे कलकत्ता से पुरी जाने की इच्छा से आए हैं। लेकिन महाराज ने श्री मजूमदार को जोर देकर कलकत्ता लौटने को कहा। जब श्री मजूमदार भुवनेश्वर रेलवे स्टेशन पहुँचे, तो वे यह देखकर आश्चर्यचकित हुए कि महाराज ने पहले से ही एक ब्रह्मचारी को यह सुनिश्चित करने के लिए भेजा था कि श्री मजूमदार टिकट खरीदकर कलकत्ता के लिए रवाना हो। बाद में श्री मजूमदार एक दिन बेलूड़ मठ आए और स्वामी ब्रह्मानन्द से पूछा, 'महाराज, आपने उस दिन मुझे पुरी जाने की अनुमति क्यों नहीं दी?' इस पर महाराज बोले, 'आपकी पुरी यात्रा के लिए वह समय सबसे अशुभ था। यदि आप वहाँ गए होते, तो आपकी मृत्यु अटल थी।'[५७]

एक बार महाराज पुरी जा रहे थे। रास्ते में एक छोटी-सी घटना घटी जो स्वामी ब्रह्मानन्द की त्याग, विवेक और वैराग्य की भावना को दर्शाती है। उनके साथ एक व्यक्ति यात्रा कर रहे थे। वे कलकत्ता से चांदबाली तक स्टीमर से और फिर बैलगाड़ी से पुरी गए। बैलगाड़ी से यात्रा करते समय, उन्होंने सड़क के किनारे दस रुपये का नोट पड़ा देखा। महाराज ने नोट को अनदेखा कर जप करना जारी रखा। उनके साथी ने महाराज के मना करने के बावजूद भी नोट ले लिया। महाराज ने उनसे कहा कि एक साधु को

ऐसे पैसों के मामलों में कोई रुचि नहीं दिखानी चाहिए। साथी ने महाराज से उसके कृत्य को उचित ठहराते हुए तर्क किया। उसने कहा कि यदि धन का उपयोग अपने लिए न भी किया जाए, तो दूसरों की सहायता के लिए तो किया ही जा सकता है। यह सुनकर महाराज नाराज हो गए और मौन हो गए। तब से महाराज के मन में उस साधु के प्रति कोई आदर न रहा। बाद में उस व्यक्ति ने विवाह कर लिया और संसार में लिप्त हो गया।

बलराम बोस के पिता राधामोहन बोस की मृत्यु के बाद उनका श्राद्ध कोठार में करने का निर्णय हुआ। बलरामबाबू, तुलसीराम और राखाल महाराज श्राद्ध के लिए आवश्यक सामग्री लेकर 'सर जॉन लॉरेन्स' नामक बड़े स्टीमर से कोठार जा रहे थे। डायमंड हार्बर के निकट उसे भयंकर तूफान का सामना करना पड़ा। अपना सामान स्टीमर में ही छोड़कर वे सब कलकत्ता लौट आए। उसी रात तूफान के कारण वह स्टीमर डूब गया और परिणामस्वरूप लगभग ७५० लोग मर गए। इसके बाद वे 'कारलू' नामक दूसरे स्टीमर से कोठार के लिए रवाना हुए।[५८]

भुवनेश्वर मठ का निर्माण-कार्य प्रगति पर था। राजा महाराज वहाँ काम की देखरेख कर रहे थे। उनकी शिष्या तारासुंदरी, जो बंगाली रंगमंच की प्रसिद्ध अभिनेत्री थी, अपच से पीड़ित थी। महाराज ने उसे भुवनेश्वर के केदार-गौरी मन्दिर स्थित तालाब का जल पीने की सलाह दी, जिससे उसे पेट की सभी तरह की बीमारियाँ ठीक हो जाएँगी। जब तारासुंदरी भुवनेश्वर गई और दूधवाला धर्मशाला में ठहरी, तो वह ठाकुर के प्रसाद के अलावा कुछ नहीं खाती थी। प्रसाद की व्यवस्था भुवनेश्वर मठ से की जाती थी। महाराज प्रतिदिन इस मामले की व्यक्तिगत रूप से देखभाल करते थे। ठाकुर को भोग लगते ही तारा के लिए प्रसाद तुरन्त भेजा जाता था। वह प्रतिदिन पूजा करती और मठ से प्रसाद प्राप्त किए बिना जल भी ग्रहण नहीं करती थी। मठ से एक व्यक्ति ठाकुर का प्रसाद तथा पान और चाय बनाने की सामग्री लेकर आता था। उस समय वह सामग्री वहाँ उपलब्ध नहीं थी। तारा को कभी भी माता-पिता का प्यार और स्नेह नहीं मिला, लेकिन उसके गुरु ने उसकी पूर्णता की। यह सोचकर उसकी आँखें नम हो जाती थीं। कभी-कभी संकोचवश वह कह देती थी कि अगले दिन से मठ में प्रसाद लेने मैं स्वयं आऊँगी। महाराज उसे यह कहकर आने की अनुमति नहीं देते थे कि, 'देखो बेटी तारा, यहाँ बहुत गर्मी है और कोई वाहन भी उपलब्ध नहीं है। तुम यहाँ आने का कष्ट मत करो, मैं तुम्हारे यहाँ प्रसाद भिजवा दूँगा।'[५९]

तारासुन्दरी ने अपने संस्मरणों में कहा है – 'एक बार मैं भगवान जगन्नाथ के दर्शन की इच्छा से पुरी गई थी। पुरी जाते समय मैं भुवनेश्वर शहर में रुकी और एक धर्मशाला में ठहरी। तब मैंने सुना कि स्वामी ब्रह्मानन्द भुवनेश्वर रामकृष्ण मठ में ठहरे हुए हैं। तो मैं उनसे मिलने मठ चली गई। आहा, उन्होंने कितनी आत्मीयता से मेरा स्वागत किया! बड़ी उत्सुकता और स्नेह से उन्होंने मुझे बैठाया और पूछा कि मैं क्या खाना चाहूँगी, इत्यादि। उन्होंने कहा, 'अफसोस, चिलचिलाती धूप ने तुम्हारा मुँह सुखा दिया होगा। तुम यहाँ स्वास्थ्यलाभ के लिए आई हो। तुम्हें चिलचिलाती धूप में नहीं आना चाहिए था! ... तुम अपना भोजन कहाँ करती हो? कल से तुम हमारे साथ आकर भोजन करो। बताओ तुम्हें कैसा भोजन पसंद है।' फिर उन्होंने करुणा भरे स्वर में कहा, 'देखो बेटी, हम तो निर्धन साधु, संन्यासी और फकीर हैं! हम तुम्हारे खानपान के लिए यहाँ क्या कर सकते हैं!'

'उनके प्रेम और सौहार्द ने मुझे पूरी तरह से अभिभूत कर दिया और मैं अवाक् रह गयी। मैंने सोचा कि मैं कौन थी! समाज में मेरा स्थान निम्न स्तर का था! इस कारण समाज से मुझे घृणा और अनादर के अलावा कुछ भी पाने का अधिकार नहीं था। मेरे कोई पिता, रिश्तेदार या दोस्त नहीं थे जिन्हें मैं अपना कह सकूँ। मेरे लिए पूरी दुनिया किसी और का घर था और मैं एक अजनबी थी। कोई भी मुझसे बात भी नहीं करता था या मुझे बिना स्वार्थ के देखता भी नहीं था! ... लेकिन आज सर्व-त्यागी साधु जिनका सभी सम्मान करते हैं, ऐसे स्वामी ब्रह्मानन्द ने अपने शुद्ध प्रेम, स्नेह और अनपेक्षित विशेष देखभाल से मुझे अपनाया!' **(क्रमशः)**

सन्दर्भ सूत्र – ५३. हिस्ट्री ऑफ रामकृष्ण मठ एण्ड रामकृष्ण मिशन (अंग्रेजी) लेखक-स्वामी गम्भीरानन्द पृष्ठ-१९९-२०१ **५४.** देबलोकेर कथा (बंगाली) लेखक-स्वामी निर्वाणानन्द पृष्ठ-१८ **५५.** स्वामी ब्रह्मानन्द ॲज वी सॉ हिम (अंग्रेजी) लेखक- स्वामी आत्मश्रद्धानन्द पृष्ठ-३९०, ३९९ **५६.** देबलोकेर कथा (बंगाली) लेखक-स्वामी निर्वाणानन्द पृष्ठ-१०४-१०५ **५७.** रेमिनिसेन्सेस ऑफ स्वामी ब्रह्मानन्द, लेखक-ब्र. अक्षयचैतन्य अनुवादक-स्वामी भास्करानन्द पृष्ठ-६३-६४ **५८.** श्रीमत् विवेकानन्द स्वामीजीर जीवनेर घटनाबली (बंगाली) लेखक- महेद्रनाथ दत्त खण्ड-१ पृष्ठ-१७६-१७७ **५९.** श्रीरामकृष्ण ओ बंग रंगमंच (बंगाली) लेखक-नलिनीरंजन चट्टोपाध्याय पृष्ठ-१०१-१०२

रामनवमी विशेष

रामकथा की वैश्विक परम्परा

जी. एस. केशरवानी, आनन्द प्रकाश सोलंकी

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की महिमा भारतीय प्रायद्वीप सहित विश्व के अनेक देशों में व्याप्त है। विश्व के अनेक देशों के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पटल में हर देश की अपनी-अपनी रामायण परम्परा है, अलग-अलग संस्कृतियों, लोकजीवन, कहानी, किम्वदन्तियों में रामायण विविध स्वरूपों में मिलती है।

इन देशों में आज भी प्रभु राम को बड़ी श्रद्धा से याद किया जाता है। रामायण, रामलीला का मंचन और विभिन्न स्वरूपों में रामकथा पढ़ी, लिखी और गायी जाती है। रामायण और राम की कथा तीन सौ से लेकर एक हजार तक की संख्या में विविध स्वरूपों में मिलती है, जिनमें सबसे प्राचीन मानी जाती है वाल्मीकि रामायण।

छत्तीसगढ़ की कला-संस्कृति की नगरी रायगढ़ में १ जून से ३ जून, २०२३ तक राष्ट्रीय रामायण महोत्सव का आयोजन किया गया। इस आयोजन में देश के अलग-अलग राज्यों के साथ ही दक्षिण पूर्वी एशिया के दो देश कंबोडिया और इंडोनेशिया के रामायण की परम्परा के विविध स्वरूपों की झलक देखने को मिली। महोत्सव में अरण्यकाण्ड पर आधारित विशेष प्रस्तुति दी गई।

'रामकियन'

'रामकियन' थाईलैंड में रामायण का एक सर्वाधिक प्रचलित स्वरूप है, जिसे यहाँ की राष्ट्रीय पुस्तक का स्तर प्राप्त है। प्राचीन समय में थाईलैंड की राजधानी 'अयुत्या' का नाम भी श्रीराम की राजधानी अयोध्या के नाम पर रखा गया था। 'रामकियन' के अनुसार थाईलैंड के राजा स्वयं को राम के वंशज मानते थे, ईसा के बाद की प्रारम्भिक शताब्दियों में कई राजाओं का नाम राम रहा है। थाईलैंड में रामायण की कथा आम जनमानस के बीच बहुत लोकप्रिय है। यहाँ रामायण के विभिन्न नाटकीय संस्करण और इस पर केन्द्रित नृत्य प्रचलित हैं। यहाँ राजा को राम की पदवी से जाना जाता था।

'रिमकर' या 'रामकरती'

राम के असाधारण व्यक्तित्व और उनकी कीर्ति गाथा का एक स्वरूप कम्बोडिया में अत्यन्त प्रसिद्ध है। रामायण महाकाव्य पर आधारित कंबोडियाई महाकाव्य 'रिमकर' जिसे 'रामकरती' भी कहा जाता है, जो संस्कृत के रामायण महाकाव्य पर आधारित कंबोडियाई महाकाव्य कविता है, जिसका शाब्दिक अर्थ हिन्दी में 'राम की महिमा' या 'राम कीर्ति' है। यह अच्छाई और बुराई के संतुलन को दर्शाती है।

'काकविन रामायण'

इंडोनेशिया की लोक परम्परा और यहाँ की संस्कृति में रामायण की गहरी छाप है। यहाँ जावा की प्राचीनतम कृति में रामायण को 'काकविन रामायण' कहा जाता है, जिसमें पारम्परिक संस्कृत को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया है। इंडोनेशिया में काकविन का अर्थ महाकाव्य है, यहाँ की प्राचीन शास्त्रीय भाषा जावा में रचित महाकाव्यों में काकविन रामायण का स्थान सर्वोपरि है, इस ग्रन्थ में छब्बीस अध्याय हैं, जिसमें राम के जन्म से लेकर लंका-विजय, उनके अयोध्या लौटने और राज्याभिषेक तक सम्पूर्ण वर्णन मिलता है। इंडोनेशिया में १९७३ में अन्तर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन का आयोजन किया गया था। यहाँ बड़ी संख्या में संरक्षित पांडुलिपियाँ इसकी लोकप्रियता को प्रमाणित करती हैं। अंगद के पिता बाली के नाम पर यहाँ एक द्वीप का नाम बाली है।

रामायण के प्रसंगों पर नाट्यमंचन

वियतनाम में रामायण के गहरे प्रभाव का प्रमाण मिलता है। वियतनाम में रामायण से जुड़े विभिन्न प्रसंगों के गायन और नाट्यमंचन की संस्कृति है। उल्लेखनीय है कि पहली से १६वीं सदी तक वियतनाम चम्पा नगर के नाम से जाना जाता था, जहाँ हिन्दू राजवंश का शासन था। वियतनाम के त्रा-किउ नामक स्थल से प्राप्त एक शिलालेख में महर्षि वाल्मीकि का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। ○○○

(नयानारा, जून २०२३ से साभार)

गीतातत्त्व-चिन्तन

तेरहवाँ अध्याय (१३/६)

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था। अब प्रस्तुत है १३वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

तीन गुणों के असन्तुलन से पाँच महाभूतों का निर्माण

अब यह जो मायाशक्ति है, यह त्रिगुणात्मिका है। सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण इन तीनों गुणों का मिश्रण यह संसार है। ये तीनों गुण जब साम्यावस्था में, परस्पर सन्तुलन बनाए हुए रहते हैं, उसको हम अव्यक्त की स्थिति कहते हैं। तीनों गुणों की साम्यावस्था का जब सन्तुलन बिगड़ जाता है, तब उसमें जो प्रक्रिया शुरु हो जाती है, उसीको स्पन्दन कहते हैं। प्रलयकाल में संसार के सारे पदार्थ धीरे-धीरे अपने कारण में जाते-जाते तीन गुणों में परिवर्तित हो जाते हैं और तीनों गुण फिर जाकर एक साम्यावस्था में स्थित रहते हैं। वेदान्त अनुमान से यही बताते हैं कि तीनों गुणों की साम्यावस्था थी; और वह अवस्था जब विकृत हो गयी, जब उसमें भूचाल आ गया; असन्तुलन की स्थिति आ गई, तो फिर ये ही गुण आपस में क्रिया करते हैं और उस क्रिया से स्पन्दन पैदा होता है और उससे पाँचों महाभूतों का निर्माण होता है। प्रत्येक भूत में तीनों गुण – सत्त्व, रजस्, तमस् – विद्यमान हैं। अब जैसे आकाश के सतोगुणवाले तत्त्व से शब्द बनता है। कानों के भीतर की सुनने की शक्ति सत्त्वगुण से निर्मित होती है, आकाश के सत्त्व गुणवाले तत्त्व से। वायु के सतोगुणी तत्त्व से त्वचा द्वारा स्पर्श से ठण्ड, गर्म, ठोस, नर्म आदि अनुभवों को देनेवाली शक्ति आती है।

हम जानना चाहेंगे कि विज्ञान द्वारा यह तथ्य प्रमाणित है अथवा नहीं। अभी तक तो हम यही जानते थे कि matter अलग है और energy अलग है, पर अब तो विज्ञान ने कह दिया है कि Energy का concentrated रूप ही matter है। Energy सूक्ष्म अवस्था है और पहले मानते थे कि heat energy, magnetic energy, sound energy – सब अलग-अलग हैं और अब सिद्ध हो गया है कि सबको एक ही energy में परिवर्तित किया जा सकता है। एक ही fundamental (मौलिक) energy है, जिसके भिन्न-भिन्न रूपान्तर हैं। मेरे मतानुसार सृष्टि-क्रम जो शास्त्रों में वर्णित है, वह बहुत वैज्ञानिक है और आधुनिक वैज्ञानिक धीरे-धीरे उस दिशा में जा रहा है। अभी तक के वैज्ञानिक प्रयोग शास्त्रीय सिद्धान्तों को पुष्ट ही करते हैं। अग्नि (अपनी अत्यन्त सूक्ष्मावस्था में जब हो तब) का दर्शन मात्र एक योगी अपने मन की एक विशिष्ट अवस्था में ही कर सकता है। मन में अग्नि के उस सतोगुणी तत्त्व का अनुभव कर सकता है, जो कि आकलनीय नहीं है। सामान्य इन्द्रियों के द्वारा उसको हम ग्रहण नहीं कर सकते। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि वे हैं ही नहीं। कितना भी सूक्ष्मदर्शी यन्त्र आप ले लें, electron को तो आप देख नहीं सकते, पर इसका अर्थ यह तो नहीं है कि उसका अस्तित्व ही नहीं है। Electron का आकलन हम उसकी क्रियाओं के द्वारा करते हैं।

क्षेत्र की सजीवता क्षेत्रज्ञ के सम्पर्क के कारण

यहाँ पञ्चमहाभूतों की सूक्ष्मावस्था की चर्चा है और भगवान अर्जुन को बता रहे हैं कि ये सब चाहे जितने भी सूक्ष्मातिसूक्ष्म हों, क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। यदि लोहे के गोले को कुछ काल तक आग के सम्पर्क में रखकर निकाल लिया जाए,

तो दिखने में तो वह लगेगा वही लोहे का गोला, पर उसे छूने से हाथ जलेगा। तो जलाने की यह शक्ति पहले उसमें नहीं थी। आग के सम्पर्क से आ गई। आग लोहे का धर्म नहीं है। ठीक उसी प्रकार ये शरीर और मन इत्यादि जड़ हैं। इनमें अपनी कोई चेतना नहीं है। परन्तु चूँकि वे चैतन्य स्वरूप आत्मा के सामीप्य में सदा रहते हैं और उसके कारण उनमें वह धर्म उत्पन्न होता है, जो धर्म अनित्य है। मालूम पड़ता है कि शरीर में चेतना है, पर वस्तुत: चेतना है नहीं। इन्द्रियाँ काम करती दिखाई देती हैं। मनुष्य conscious मालूम होता है। यह चेतना के द्वारा होता है। यह चेतना आई कहाँ से? सदा आत्मा के सन्निकट रहने के कारण शरीर में भी चेतना का आभास आत्मा के संघात से होता है। यह चेतना जो उस क्षेत्रज्ञ की चेतना से भिन्न है, उसको जड़ की श्रेणी में रखा है और उसे क्षेत्र कहा। धृति ही नियमन करनेवाली वृत्ति है। अन्त:करण की भिन्न-भिन्न वृत्तियाँ अपने छहों विकारों (अस्ति, जायते, वर्धते, परिणमते, अपक्षीयते, नश्यति) सहित क्षेत्र कहलाई।

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह:।।७।।
इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शनम्।।८।।
असक्तिरनभिष्वङ्ग: पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु।।९।
मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि।।१०।।
अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा।।११।।

अमानित्वम् अदम्भित्वम् अहिंसा क्षान्ति: (अभिमान का अभाव, दम्भ का अभाव, अहिंसा, क्षमाभाव) आर्जवम् आचार्योपासनम् शौचम् स्थैर्यम् आत्मविनिग्रह: (सरलता, गुरुभक्ति, शुद्धि, स्थिरता और शरीर, मन का निग्रह) इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम् च अनहंकार: एव (इन्द्रिय भोगों से वैराग्य और अनहंकार) जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शनम् (जन्म, मृत्यु, जरा, रोग, दुख आदि के दोषों का विवेक) पुत्रदारगृहादिषु असक्ति: अनभिष्वंग: च (पुत्र, स्त्री, धन आदि में अनासक्ति, ममता का अभाव तथा) इष्टानिष्टोपपत्तिषु नित्यम् समचित्तत्वम् (प्रिय-अप्रिय की प्राप्ति में सदा चित्त की समता) मयि अनन्ययोगेन अव्यभिचारिणी भक्ति: च (मुझमें अनन्ययोग से एकान्तिक भक्ति तथा) विविक्तदेश सेवित्वम् जनसंसदि अरति: (एकान्तप्रियता, सांसारिक प्रेम का अभाव) अध्यात्मज्ञान नित्यत्वम् तत्वज्ञानार्थ दर्शनम् (अध्यात्मज्ञान में प्रतिष्ठा, तत्त्वज्ञान का सार जानना) एतत् ज्ञानम् यत् अत: अन्यथा (यह सब ज्ञान है, जो इससे विपरीत है) अज्ञानम् इति प्रोक्तम् (वह अज्ञान कहा गया है)।

''अभिमान का अभाव, दम्भ का अभाव, अहिंसा, क्षमाभाव, सरलता, गुरुभक्ति, शुद्धि, स्थिरता और शरीर-मन का निग्रह, इन्द्रिय भोगों से वैराग्य और अनहंकार, जन्म, मृत्यु, जरा, रोग, दुख आदि के दोषों का विवेक, पुत्र, स्त्री, धन आदि में अनासक्ति, ममता का अभाव तथा प्रिय-अप्रिय की प्राप्ति में सदा चित्त की समता, मुझमें अनन्ययोग से एकान्तिक भक्ति तथा एकान्तप्रियता, सांसारिक प्रेम का अभाव, अध्यात्मज्ञान में प्रतिष्ठा, तत्त्वज्ञान का सार जानना, यह सब ज्ञान है, जो इससे विपरीत है, वह अज्ञान कहा गया है।''

क्षेत्रज्ञ तत्त्व की जानकारी

क्षेत्रज्ञ तत्त्व इन्द्रियों द्वारा अग्राह्य

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते।।१२।।

यत् ज्ञेयम् यत् ज्ञात्वा (जो जानने योग्य है, जिसको जानकर) अमृतम् अश्नुते (अमृत प्राप्त होता है) तत् प्रवक्ष्यामि (उसको कहता हूँ) तत् अनादिमत् परम् ब्रह्म (वह अनादि परम ब्रह्म) न सत् उच्यते च असत् (न सत् कहा गया है न असत्)।

''जो जानने योग्य है, जिसको जानकर अमृत प्राप्त होता है, उसको कहता हूँ, वह अनादि परम ब्रह्म न सत् कहा गया है, न असत्।''

सातवें से ग्यारहवें श्लोक तक भगवान अर्जुन को वह ज्ञान देते हैं, जिससे आगे चलकर बारहवें श्लोक में बताए गए क्षेत्रज्ञ के परिचय को समझने में वह समर्थ हो सके। भगवान ने क्षेत्रज्ञ को ज्ञेय शब्द से अभिहित किया है। कहते हैं, यह ज्ञेय है जिसको जानकर मनुष्य अमृत का भोजन करता है, अमृतस्वरूप को, परमानन्द को प्राप्त होता है।

भगवान का तात्पर्य यह है कि जो क्षेत्रज्ञ को जान लेता है, उसको अपने स्वरूप का भी बोध होता है। मनुष्य यदि अपने स्वरूप का बोध कर ले, तो वह अमृत तत्त्व को पाने की ही स्थिति है। भगवान जो यह बताते हैं कि यह ज्ञेय न तो सत् है और न असत् है, तो उसका गूढ़ तात्पर्य क्या है? संसार में जो कुछ भी ज्ञेय होता है, वह इन्द्रियों के सहारे जाना जाता है। पर यह क्षेत्रज्ञ ऐसा ज्ञेय है, जिसको इन्द्रियों से हम पकड़ नहीं पाते। संसार में कुछ समय के लिए दिखाई देनेवाली भी जो सत् वस्तुएँ हैं, वे भी इन्द्रियों की पकड़ में आती हैं। जो असत् हैं, जैसे रस्सी के बदले साँप का दिखना, उस असत् का बोध भी इन्द्रियों के सहारे होता है। साँप के न रहने पर भी इन्द्रियाँ रस्सी में ही साँप को देख लेती हैं। पानी के न रहने पर भी उन्हें मरुभूमि में पानी दिख जाता है। इस प्रकार ये इन्द्रियाँ सत् को भी देखती हैं और असत् को भी देखती हैं। पर यह क्षेत्रज्ञ ऐसा ज्ञेय है, जो इन्द्रियों की पकड़ में नहीं आता। उसके सम्बन्ध में ऐसा नहीं कहा जा सकता कि यह सत् ज्ञेय है या असत् ज्ञेय है। वह दोनों से परे है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यह जो क्षेत्रज्ञ है, वह इन्द्रियों की पकड़ का विषय नहीं है। यदि क्षेत्रज्ञ को इन्द्रियों से जाना न जाए, तब फिर उसका बोध कैसे होगा? ऐसा प्रश्न उठ सकता है। संसार में जो ज्ञान की प्रक्रिया चलती है, वह इन्द्रियों के सहारे ही होती है। जो भी ज्ञान हमें प्राप्त होता है, वह इन्द्रियों के माध्यम से ही प्राप्त होता है। फिर यदि हम कहें कि इन्द्रियों से वह ज्ञेय ज्ञातव्य नहीं है, तो फिर शंका होती है कि आखिर उसे जाना कैसे जाएगा?

ध्यानयोग द्वारा क्षेत्रज्ञ की जानकारी सम्भव

जिस वस्तु को कोई प्रमाण पकड़ नहीं पाता, उस वस्तु को जानने का एक बिलकुल अलग तरीका है। जो संसार का परम मूल कारण है, जहाँ से यह प्रकृति निकली है और प्रकृति से सारी की सारी सृष्टि उपजी है, वह इन्द्रियों की पकड़ में तो नहीं आया, पर उसे योगियों ने एक भिन्न तरीके से जाना। ध्यानयोग का अनुगमन करते हुए उन्होंने उस परम मूल कारण को जान लिया। ध्यानयोग का अर्थ मन की एकाग्रता अवश्य होता है, पर योग में जो मन की एकाग्रता प्राप्त होती है, वह साधारणत: प्राप्त होनेवाली मन की एकाग्रता से भिन्न है। जैसे चित्रकार चित्र बनाते हुये एकाग्र हो जाता है। वह उस प्रकार की एकाग्रता नहीं है। एकाग्रता का अर्थ है मन को मन के भीतर केन्द्रित कर देना। इससे मन में जो एक भोथरापन है, वह निकल जाता है। मन में पैनापन आता है। मन अपनी गहराई में उतरने लगता है। इसे योग की एकाग्रता कहते हैं। तो ध्यानयोग का अर्थ यह हुआ कि मन को संसार की सब वस्तुओं से समेट कर उसे अपने ही ऊपर एकाग्र कर देना। इसे हम भक्ति से, ज्ञान से और राजयोग के द्वारा भी सिद्ध कर सकते हैं। यह जो मन को मन के ही ऊपर एकाग्र करने के भिन्न-भिन्न तरीके हैं, उनको अपने जीवन में, व्यवहार में लाने के ढंग को योग कहते हैं। उस योग अथवा ध्यानयोग के सहारे हम उस परम मूल तत्त्व को जानने में समर्थ होते हैं। जैसे कि यहाँ कहा गया – ज्ञेय को जान लेने के बाद मनुष्य अमृत तत्त्व का अधिकारी बनेगा। इसके बाद के श्लोकों में यह बताया गया है कि वह ज्ञेय प्रकाशित कैसे होता है। गीता में भिन्न-भिन्न प्रकार से उसी एक परमात्मा का वर्णन है। बार-बार ऐसा आभास होता है कि गीता में बातें दुहरा दी जाती हैं। गीता सूत्रबद्ध ज्ञान नहीं है। सूत्रबद्ध ज्ञान में पुनरावृत्ति नहीं होती। उनमें विस्तार नहीं है। वहाँ तो अत्यन्त संक्षेप में प्रत्येक बात को कहने का प्रयास किया गया है। परन्तु जो सूत्रग्रन्थ नहीं हैं, उनमें बारम्बार किसी एक तथ्य को भिन्न-भिन्न कोणों से बताने की परम्परा है। **(क्रमशः)**

कविता

श्रीराम राम जय राम राम

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

श्रीराम राम जय राम राम जय, सब सुख मंगलकारी ।
जय पतित-उधारन कृपापरायण भवभयबन्धनहारी ।।
जय दशरथनन्दन सब सुखवर्धन, स्वर्ण-मुकुट सिरधारी ।
जय धर्मविभूषण सीतापति हे दुख-दारिद्र्य-निवारी ।।
जय सुरगणपूजित मुनिजन-अर्चित, सब मन नन्दनकारी ।
जय भुवन महेश्वर सब जन मोहक, हनुमत् हृदय-विहारी ।।
जय शंकरपूजित लक्ष्मणसेवित, विषय-विराग प्रसारी ।
जय गुरुजन सेवक विश्वविमोहक, जगत-ताप संहारी ।।

साधुओं के पावन प्रसंग (७५)

स्वामी बोधानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद स्वामी पद्माक्षानन्द ने किया है, जिसे धारावाहिक रूप से प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

''स्वामी त्रिगुणातीतानन्द जी महाराज अत्यन्त कठोर स्वभाव के थे। आश्चर्यजनक रूप से वे सभी के साथ हमउम्र जैसा व्यवहार कर सकते थे। युवकों के साथ युवकों जैसा, वृद्धों के साथ वृद्धों जैसा तथा स्त्रियाँ भी उनके साथ वार्तालाप करने में संकोच नहीं करती थीं। ऐसा लगता, जैसे वे उनलोगों के बीच में से एक हों। महाराज युवकों में भीतर ब्रह्मचर्य पालन करने का भाव प्रविष्ट कराने का प्रयास करते थे। युवकों के आने पर यही सब बातें पूछते थे तथा बाद में बीच-बीच में पूछताछ करते रहते थे कि उनकी उन्नति हुई कि नहीं। महाराज अत्यन्त सादा-सीधा, सरल स्वभाव के थे। उनके भीतर सांसारिक बुद्धि थी ही नहीं। जब एक बार उनको माला खरीदने के लिए भेजा गया, तब वे राशन दुकान में जाकर पूछने लगे कि यहाँ पर माला मिलता है कि नहीं।

''योगीन महाराज (स्वामी योगानन्द जी) काशी में कठोर तपस्या करते थे। यहाँ तक कि चौबीस घण्टा में से बीस-बीस घण्टा तक जप-ध्यान करते। एक दिन भिक्षा लेकर आते और उसे तीन-चार दिन तक ग्रहण करते थे। उनका ऐसा सोचना था कि कौन जाये सत्र में प्रतिदिन भिक्षा करने? उसमें तो समय नष्ट होगा। वे रोटियों को लकड़ी में लटकाकर रखते थे। इससे वे बहुत सूख जाती थीं। तत्पश्चात् वे उसको पानी में भिंगाकर खाते थे। इस प्रकार कठोरता करते-करते उनका शरीर खराब हो गया, आमाशय रोग हो गया। काशी में उनका इतना नाम हुआ था कि सभी उनपर श्रद्धा करते थे। एक बार काशी में दंगा हुआ। यहाँ तक कि साधु-संन्यासियों के ऊपर भी अत्याचार हुआ, किन्तु कोई भी योगीन महाराज के पास नहीं गया। वे लोग कहते थे, वहाँ पर एक अच्छे संन्यासी हैं। उनको श्रद्धापूर्ण दृष्टि से देखो।

स्वामी योगानन्द जी महाराज

शरत महाराज (स्वामी सारदानन्द जी) भी जब काशी से तपस्या करने के पश्चात् आलमबाजार मठ में वापस आये, तब वे बहुत दुबले-पतले हो गये थे। पेट की हड्डी बाहर आ गयी थी, जैसे सुखी हुई लकड़ी हो।

स्वामीजी ने कश्मीर में क्षीरभवानी में दर्शन के बाद 'Kali the Mother' कविता लिखी थी। उस समय जैसे वे एक अन्य भाव में थे, एक अन्य-लोक में थे तथा आध्यात्मिक और भाव समाधि के राज्य में रहते थे। 'Kali the Mother' लिखने के बाद वे बैठ गये तत्पश्चात् गिर पड़े। उनका शरीर जैसे उस भाव-भार को सहन नहीं कर पा रहा था। वे कहते थे कि कविता का सम्पूर्ण चित्र उनकी आँखों के सामने सत्य जैसा उद्भासित हो रहा था। उन्होंने वह सब केवल लिखित भाव से प्रकट किया था। बाद में भी जब वे वह कविता गाते, तब उनके नाक-मुँह-चेहरे का भाव अन्य प्रकार का हो जाता था। वे एक उच्च-लोक में चले जाते थे। उनके चेहरे की ओर उस समय देखा नहीं जाता था।

वराहनगर में श्रीरामकृष्ण के शिष्यों के पास जपमाला थी। वे लोग जप करते थे। ठाकुर ने ही माला का शोधन (शुद्ध करना) कर दिया था। ठाकुर द्वारा शोधन और क्या? उन्होंने उसको छू दिया था। वराहनगर के किसी-किसी की माला रहस्यमय ढंग से गायब हो गयी थी। गायब होने का सम्भावित कोई कारण नहीं पाया गया। माला बक्सा में रखी है, वहाँ से तो गायब होने का कोई कारण नहीं था। तब किसी-किसी के मन में ऐसा विचार आया कि सिद्धमाला द्वारा उचित रूप

से जप नहीं करने के कारण वे अन्तर्धान हो गयीं।

बाबूराम महाराज (स्वामी प्रेमानन्द जी) जब वृन्दावन में तपस्या कर रहे थे, तब अनेक लोग उनकी बहुत श्रद्धा करते थे। वे अत्यन्त वैष्णवभाव से रहते थे, उनका वैष्णवों जैसा विनय-भाव, चाल-चलन था। ठाकुर उनको राधा का अंश कहते थे। वृन्दावन में उनको देखने से यह बात स्पष्ट समझ में आ जाती थी कि वे राधारानी के अंश हैं। वे जिस कमरे में रहते थे, उस कमरे में ठाकुर का एक छोटा-सा चित्र था। वे जब कहीं घूमने जाते, गले में उसको लटका लेते (अपने शरीर पर एक चादर ओढ़ लेते थे, जिससे लोग उसे देख न पायें) तब बाहर जाते थे। उनका चेहरा देखने से मालूम होता कि वे कोई असाधारण व्यक्ति हैं। लगता है इसीलिए लोग उनपर श्रद्धा करते थे। वे साधुओं को देखने से ही 'राधे-राधे' बोलकर प्रणाम करते तथा अत्यन्त श्रद्धा-भाव दिखाते। वे मेरे साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार करते, जो मुझे अच्छा नहीं लगता था। वे प्रात:काल तीन घण्टा तक जप-ध्यान करते, किन्तु पूरे दिन एक भाव में ही रहते थे। देखने से ही लगता कि वे एक अन्य भाव-राज्य में हैं। ऐसा लगता जैसे वे स्मरण-मनन कर रहे हैं या तो शान्त बैठे हुए भगवत-चिन्तन कर रहे हैं। वे ऐसे भी वार्तालाप नहीं करते थे।

बाबूराम महाराज के साथ मैं एक बार जयरामवाटी गया था। वे उस अंचल में जाकर ठाकुर के सम्बन्धित स्थान तथा लोगों के साथ मिलने में बहुत व्यस्त हो गये। जिस व्यक्ति ने श्रीरामकृष्ण को देखा है, उस व्यक्ति से मिलने के लिए वे आज यहाँ पर तो कल वहाँ पर आठ-दस माईल दूर तक जाते थे तथा उसके पास ठाकुर के विषय में बातें सुनते थे।

गिरीशचन्द्र घोष निरंजन महाराज (स्वामी निरंजनानन्द जी) के बहुत भक्त थे। निरंजन महाराज ने गिरीश बाबू को संन्यास लेने के लिए बहुत कहा। इसीलिए निरंजन महाराज के साथ गिरीश बाबू श्रीमाँ सारदा देवी से अनुमति लेने के लिए गये। मैं भी उनके साथ था। गिरीश बाबू की क्या भक्ति थी! श्रीमाँ के स्थान की मिट्टी भी जैसे पवित्र हो। श्रीमाँ के स्थान में खेती का कार्य करने वाले लोग भी धन्य हैं। ऐसा उनका भाव था। एक दिन सन्ध्या समय वे श्रीमाँ का दर्शन करने गये तथा श्रीमाँ को बहुत डाँट-फटकार तथा शोर-गुल करने लगे। उनका मोटा शरीर तथा थियेटर में अभिनय करने का अभ्यास था – उन्होंने एक नाटक रच दिया। उन्होंने कहा, ''तुम्हारे रहते मैं संसार में पड़ा हुआ हूँ। मेरा कुछ नहीं हुआ।'' इस प्रकार की बातें वे करने लगे। हमलोग तो यह सब देखकर भय से बेचैन हो गये। श्रीमाँ भी पहले थोड़ा-सा भयभीत हुईं। फिर भी श्रीमाँ शान्त तथा दृढ़भाव से (श्रीमाँ का मुँह लम्बा घूँघट से ढका हुआ था) एक-दो बातें बोलीं, ''बाबा, तुमको ठाकुर ने स्वीकार किया है। तुमको क्या भय? तुम क्यों संसार त्याग करोगे? तुम जो कर रहे हो, वह अच्छा ही तो कर रहे हो। कितने लोगों का उपकार हो रहा है।'' गिरीश बाबू इससे ही शान्त हो गये। शान्त होकर श्रीमाँ के पास से वापस आ गये। फिर भी दो-तीन दिन तक वे बहुत गम्भीर भाव में थे, जैसे एक अन्य भाव-राज्य में हो। बाद में पुन: उन्होंने हास-परिहास करना आरम्भ किया। श्रीमाँ को इतना जो उन्होंने डाँट-फटकार दिया, उसमें भी उनका एक बच्चा जैसा भाव था। बच्चा जैसे अभिमान करके अपनी माँ से किसी वस्तु को पाने के लिए जिद्द करता है, उन्होंने भी उसी प्रकार श्रीमाँ को डाँट-फटकार किया था।

स्वामी विवेकानन्द जी का मैंने पहली बार आलमबाजार मठ में दर्शन किया था। उनको देखने से ऐसा लगा कि उनके आँख, मुँह तथा पूरे शरीर से एक शक्ति बाहर निकलकर आ रही है। मुँह ज्योतिर्मय, आँखें ज्योतिपुंज। यद्यपि वे हास-परिहास कर रहे हैं, तथापि ऐसा लग रहा है कि मानो उनके भीतर आग छिपी हुई है। एक दिन सन्ध्या समय देखा कि वे छत के ऊपर टहल रहे हैं। देखने से ऐसा लगा कि समस्त धरती जैसे उनके पदानत है। पूरी धरती जैसे उनके वीरदर्प से काँप रही है।

स्वामीजी आलमबाजार मठ में आकर अनेक समय कपड़ा-वपड़ा निकालकर केवल कौपीन पहनकर रहते थे तथा कहते थे कि ये सब छोड़-छाड़कर बच गया। आलमबाजार में वे जिस प्रकार रहते थे, उससे समझ में नहीं आता था कि वे पाश्चात्य घूम कर आये हैं। वहाँ का सभी ऐश्वर्य, नाम-यश, सुख-सुविधा जैसे उनके ऊपर लाद दिया गया हो और ये सब परित्याग करके जैसे वे श्वास लेकर बच गये, ऐसा उनका भाव था।

बेलूड़ मठ आरम्भ हुआ। लाटू महाराज (स्वामी अद्भुतानन्द जी) किसी भी प्रकार से मठ में नहीं रहना चाहते थे। दिन में आने से भी रात्रि में चले जाते थे। वे कहते कि संन्यासी का मठ-घर-मकान कैसा? **(क्रमश:)**

हीरा और चोर की कहानी

स्वामी सर्वप्रियानन्द

एक गाँव में एक वाक्सिद्ध महात्मा आए। उन्होंने जिसको जो भी कहा, वह सब पूर्ण हो गया। उस गाँव के एक चोर ने जब यह बात सुनी, तब वह महात्माजी के पास जाकर उनके चरण पकड़कर बोला – बाबाजी ! आप मुझे यह आशीर्वाद दीजिए, ताकि मैं चोरी करूँ, लेकिन पकड़ाऊँ नहीं। साधुबाबा आश्चर्यचकित होकर बोले, यह क्या बात है? ऐसा कभी हो सकता है क्या? कभी मैं ऐसा आशीर्वाद दे सकता हूँ क्या? चोर हठ करने लगा। वह बोला, बाबाजी! छह वर्ष की आयु से मैं चोरी कर रहा हूँ, अब साठ वर्ष की मेरी आयु हो गयी है, तो भी कुछ सीखा नहीं, जिससे जीविका चल सके। पहले-पहले कई बार पकड़ा गया। मेरी पिटाई भी हुई। लेकिन अब आयु अधिक हो गयी है और पिटाई भी सहन नहीं होती। नया कुछ सीखकर जीविका चला सकूँ, ऐसी आयु भी नहीं रही। इसलिए आपके पास आया, आपको आशीर्वाद देना ही पड़ेगा।

साधुबाबा ने आश्चर्यचकित होते हुए कहा – ठीक है। मैं आशीर्वाद दे सकता हूँ और वह पूर्ण भी होगा, लेकिन मेरी एक शर्त है। चोर बोला – वह क्या? साधु बाबा ने कहा – तुम कभी झूठ नहीं बोलोगे। क्या स्वीकार है? चोर तुरन्त सहमत हो गया। वह सोचा, जब पकड़ में ही नहीं आऊँगा, तब सच बोलने में क्या हानि है? प्रसन्नचित्त से आशीर्वाद लेकर घर चला गया।

दूसरे दिन रात में चोरी करने के लिए राजमहल की ओर चल पड़ा। अब वह अपने अन्दर बहुत शक्ति का अनुभव करने लगा, क्योंकि वह जानता है कि नहीं पकड़ाऊँगा और काम भी अच्छे से हो जाएगा। राजमहल के पास जाकर उसने देखा कि रात के अँधेरे में कोई वहाँ टहल रहा है। उसने उसे देखकर समझा कि यह भी चोर है, इसका भी यही धंधा है। चोर तब उसके पास जाकर बोला – भाई ! क्या तुम भी वही काम करने आये हो, जो मैं करने आया हूँ। चलो, तब दोनों मिलकर ही निपटाएँ। तब दूसरे चोर ने कहा, ठीक है। मैं तुमको एक विशेष जानकारी दे सकता हूँ। क्या? राजा के शयन कक्ष में जो पलंग है, उसकी बायीं ओर की अलमारी में बहुत ही अनमोल हीरा रखा हुआ है। लेकिन समस्या यह है कि वहाँ पहुँचने के लिए सात दरवाजों को पार करना पड़ता है, जिनमें बड़े-बड़े ताले लगे हुये हैं। लेकिन सूचना पक्की है।

पहला चोर बोला, यह मेरे लिये कोई बड़ी बात नहीं, मैं बहुत दिनों से यही काम कर रहा हूँ। वह चोर आसानी से एक के बाद एक ताला तोड़कर राजा के शयन कक्ष में प्रवेश किया और देखा कि वहाँ अलमारी है। अलमारी खोलते ही बड़े-बड़े तीन हीरे को देखा। चोर ने सोचा दो हीरा लेना ठीक रहेगा, क्योंकि तीन का बँटवारा करना कठिन है। हीरा तोड़ना कठिन है और खराब भी हो जाएगा। यह सोचकर वह दो हीरा लेकर बाहर आ गया और दूसरे चोर के पास जाकर विस्तार से सब बताया। दूसरे चोर को एक हीरा देने से वह बहुत खुश हो गया और बोला भाई अब से तुम्हारे साथ काम करूँगा। तुम अपना नाम, पता बताओ, कल मैं सही समय तुम्हारे पास पहुँच जाऊँगा। पहला चोर पता बताकर घर चला गया और चैन से सो गया। दूसरे दिन सुबह होते ही, चोर ने देखा घर को चारों ओर से राजा के सिपाहियों ने घेर कर रखा है। चोर अवाक् होकर सोचने लगा, ऐसा कैसे हुआ ! तब तक सिपाहियों ने चोर को रस्सी से बाँधकर राज-दरबार में लाया। राजा ने घोषणा की कि कल मेरा अनमोल हीरा चोरी हो गया। राजा ने चोर की ओर इंगित कर कहा कि एक आदमी ने सूचित किया कि तुमने चोरी की है। चोर सोचने लगा, साधु बाबा की बात झूठी हो गयी। यह कैसे हो सकता है। ऐसा हो ही नहीं सकता। चोर का साधु बाबा पर अटूट विश्वास था। सोचने लगा, जो होगा देखा जाएगा, मैं तो सच ही बोलूँगा। यह सोचकर चोर ने कहा, महाराज, मैंने चोरी की है। तीन हीरा वहाँ पर रखा था, जिसमें से मैंने केवल दो ही लिया था। एक हीरा भीतर में वहीं पर छोड़ दिया था। बँटवारा की सुविधा हेतु हमने दो ही लिये थे। राजा ने मंत्री को आदेश दिया, मंत्रीजी, आप मेरे कमरे में जाकर इसकी जाँच-पड़ताल कीजिए। राजा का आदेश पाकर मंत्री तुरन्त राजमहल में राजा के शयनकक्ष

में गये। आलमारी खोलकर देखा, तो सचमुच में एक हीरा वहाँ पर रखा था। इतने मूल्यवान हीरे को देखते ही मंत्री के मन में लालच आ गया। उन्होंने सोचा, चोर के सच बोलने पर भी, चोरी करने के कारण उसे सजा तो मिलेगी ही, तो क्यों न इसको मैं ही रख लूँ और चोर पर दोष लगा दूँ। मन्त्री ने वैसा ही किया। राजदरबार में जाकर मंत्री ने कहा, नहीं महाराज, आलमारी में कोई हीरा नहीं है। यह चोर झूठ बोल रहा है। राजा ने तब एक सिपाही को आदेश दिया, सिपाही! मंत्रीजी को बन्दी बनाकर इनकी तलाशी लो। पुरी सभा दंग रह गयी, सन्नाटा छा गया। सिपाही भी चौंक गया। राजा ने पुन: कहा। तब सिपाही दौड़कर मंत्री को बंदी बनाकर तलाशी ली। जैसे ही कमर में हाथ लगा, हीरा मिल गया। सभा में शोर मच गया। मंत्रीजी का सिर झुक गया। राजा ने कहा, मैं ही पिछली रात छत में छद्मवेष में वहाँ घूम रहा था। चोर ने मुझे ही दूसरा-चोर समझा था। यह देखिए मेरे पास दूसरा हीरा है। राजा ने सभासद को हीरा दिखाया। तब राजा ने सभा को सम्बोधित करके पूछा, आप ही लोग बताइये, सजा किनको मिलनी चाहिए? सभी ने एक स्वर में कहा – मंत्री को। राजा ने कहा, आप लोग सत्य कह रहे हैं। चोर तो चोरी करके ही जीवन-निर्वाह करता है, फिर भी उसमें सच्चाई है, वह सच बोलने में डरता नहीं है। वह लालची नहीं है, आवश्यकता से अधिक चोरी नहीं करता है। लेकिन मंत्री को देखो। इतने वर्षों तक राजदरबार में राजभोग खाकर, राजानुग्रह मिलने पर भी इतना लोभी, मिथ्यावादी और चोर है। ये इस पद के योग्य भी नहीं रहे। आज से चोर को मंत्री पद पर नियुक्त कर रहा हूँ। यह सुनकर चोर तो हक्का-बक्का रह गया। चारों ओर राजा की जय-जयकार होने लगी। इस बीच चोर ने देखा दरबार के बाहर दरवाजे पर साधु बाबा खड़े होकर दोनों हाथ उठाकर आशीर्वाद दे रहे हैं। चोर से रहा नहीं गया, दौड़कर साधु बाबा के चरण पर गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा। बाबाजी ने उसे धीरे से उठाकर आशीर्वाद देते हुए कहा – बेटा, इसी प्रकार सत्य को पकड़कर रहना, क्योंकि ईश्वर सत्यस्वरूप है।

जापान में कोई शिक्षक दिवस नहीं

एक दिन मैंने अपने जापानी सहकर्मी तथा शिक्षक इयामामोता को पूछा – आप लोग शिक्षक दिवस को कैसे मनाते हो? मेरा प्रश्न सुनकर उन्होंने अंचभित होकर उत्तर दिया – हमारे देश में कोई शिक्षक दिवस नहीं मनाया जाता। मैं जब उत्तर सुना, तब मैं समझ नहीं पा रहा था, मैं उसकी बात पर विश्वास करूँ या नहीं। मैं सोचने लगा, मेरे दिमाग में एक ही चिन्ता आई, ''जो देश अर्थनीति, विज्ञान और तकनीकि के क्षेत्र में इतना विकास कर रहा है, उस देश में शिक्षक की इतनी अवहेलना क्यों?''

एक बार काम समाप्त होने के बाद इयामामोता ने मुझे अपने घर पर आमंत्रित किया। मैं राजी हो गया। उनका घर काफी दूर था, इसलिये हमलोग मेट्रो से गये। शाम का समय था, इसलिए मेट्रो का हर डब्बा खचाखच भरा था। मैं सिर के ऊपर का रॉड पकड़कर खड़ा था। अचानक मेरे बगल में बैठे एक वृद्ध सज्जन ने खड़े होकर अपने स्थान पर मुझे बैठने के लिए अनुरोध किया। उन सज्जन के ऐसे व्यवहार से विस्मित होकर मैंने नम्रता से उनके अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। लेकिन वे सज्जन हठ करने लगे। मुझे विवश होकर बैठना ही पड़ा। मेट्रो से उतरने के बाद इयामामोता को मैंने पूछा – सफेद दाढ़ी वाले वृद्ध सज्जन ने ऐसा क्यों किया? इयामामोता ने मुस्कुराते हुए मेरी छाती पर लटक रहे शिक्षक के टैग की और संकेत करते हुये कहा – उन वृद्ध सज्जन ने आपके शरीर पर शिक्षक का टैग देखकर आपके पद का सम्मान करते हुये अपना स्थान आपको प्रदान किया।

मैं पहली बार इयामामोता के घर जा रहा था। बिना कुछ उपहार लेकर जाने में संकोच हो रहा था। मैं क्या खरीदूँ, यह निर्णय नहीं ले पा रहा था। वस्तु खरीदने हेतु मैंने कोई दुकान दिखाने के लिये इयामामोता को कहा। उन्होंने कहा कि आगे ही एक दुकान है, जो शिक्षक के लिये विशेष है। वहाँ जाने से शिक्षकों को सस्ते में सामान मिलता है। इस बार मैं आपने भाव को रोक नहीं पाया – मैंने पूछा, क्या केवल शिक्षकों को ही सुविधा दी जाती है?

इयामामोता बोले – जापान में शिक्षण सबसे सम्माननीय व्यवसाय है और शिक्षक सब से सम्माननीय व्यक्ति। जापान के व्यापारीगण बहुत खुश होते हैं, जब कोई शिक्षक उनकी दुकान पर आते हैं। वे लोग शिक्षक को बहुत ही सम्माननीय मानते हैं। ○○○

(स्वामी सर्वप्रियानन्द के व्याख्यान से संकलित और स्वामी विष्णुदेवानन्द द्वारा प्रेषित)

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम – राम के किंकर रामकिंकर

लेखक – स्वामी मैथिलीशरण

प्रकाशक – शिल्पायन बुक्स, १६१७ उल्धनपुर, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

प्राप्ति स्थान – श्रीरामकिंकर विचार मिशन, श्रीरामकिंकर कुटी, तुलसीमार्ग, बाइपास, चित्रकूट धाम - ४८५३३४, जिला-सतना (मध्य प्रदेश)

*** श्रीरामकिंकर कुटी, (स्वर्गाश्रम कुटी, ६१, स्वर्गाश्रम, रामझूला, ऋषिकेश - २४९३०४ (उत्तराखण्ड)**

सम्पर्क सूत्र – ९४११९११९०४

पृष्ठ – २४८+४, मूल्य – ७५०/-

४ से ६ नवम्बर, २०२४ तक असंख्य भक्तों के हृदय-प्राण 'युग तुलसी' श्रीरामकिंकर महाराज का जन्म-शताब्दी-समारोह श्रीरामकिंकर विचार मिशन, श्रीरामकिंकर कुटी, चित्रकूट के तत्त्वावधान में आयोजित हुआ। इस उपलक्ष्य में पूज्य महाराजश्री के प्रिय शिष्य और सर्वसम्माननीय श्रीरामकिंकर विचार मिशन के अध्यक्ष स्वामी मैथिलीशरण जी द्वारा रचित और सम्पादित 'राम के किंकर रामकिंकर' नामक ग्रन्थ का विमोचन पूज्य मुरारी बापू जी के कर-कमलों से किया गया। ग्रन्थ-ग्रन्थकार और ग्रन्थ में निहित तत्त्व; सबकी भव्यता दृष्टिगोचर हो रही है। २५२ पृष्ठों का यह पूरा ग्रन्थ आर्टपेपर में मुद्रित है। एक ओर ग्रन्थ के रंगीन आवरण पृष्ठ की छटा दर्शनीय है, तो दूसरी ओर ग्रन्थ के प्रतिपाद्य पूज्य श्रीरामकिंकर महाराज की सहास्य और विभिन्न मुद्राओं के चित्र नमनीय, वन्दनीय, चित्ताकर्षणीय, चिन्तनीय और स्मरणीय हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ भावना, आराधना, महाराजश्री की शरण में, प्रवचन शृंखला के कुछ बिन्दु, भाव-गुच्छ, श्रीरामकिंकर-अष्टोत्तरशतनाम नामक शीर्षकों में विभक्त है। प्रत्येक शीर्षक भाव की गम्भीरता और पूज्य महाराजजी की चेतनता से ओतप्रोत है। पुस्तक में महाराजजी के विभिन्न अवस्थाओं में प्रदत्त चित्र उनकी साक्षात् उपस्थिति का बोध कराते हैं।

'राम के किंकर रामकिंकर' ग्रंथ को जैसे ही हाथों से स्पर्श किया, उनके दिव्य चित्र की अन्तस् की अनुभूति ने महाराजजी को तात्त्विक रूप से उपस्थित कर दिया। परम श्रद्धेय स्वामी मैथिलीशरण 'भाईजी' ने जिस भाव-भूमि में इन स्मृतियों को सृजित किया है, वह निश्चित ही अश्रुधारा की अजस्र सहस्र धाराओं को प्रवाहित करते हुए किया होगा। रोम-रोम में महाराजजी की तादात्मय उपस्थिति का अनुभव जो उन्होंने किया है, वही सत्य है। इस ग्रन्थ का पठन करते हुए मानो हर शब्द आँखों के सामने सचित्र चलायमान हो रहा है। यद्यपि इसे ग्रन्थ कहना कदापि उचित नहीं हैं, यह तो अनुभूति है पूर्णता की! गुरु-तत्त्व की! जैसे महाराजजी के विषय में सुना, शब्दशः वह वैसे ही रहे, इसका प्रमाण इस जीवन-दर्शन के पठन से ज्ञात हुआ। यही संतत्वदर्शन है, यही ईश्वरदर्शन है, यही गुरुदर्शन है और सम्भवतः, यही कृपादर्शन है।

जिसके अन्तस् के प्रवाह में महाराजजी बसते हैं, जीवन के पल-प्रतिपल का दर्शन इस पुस्तक के शब्दों में, इसके भाव में, इसकी मनोभूमि में सहजता से देखा जा सकता है। महाराजजी को समझने, जानने और देखने की दृष्टि के लिये यह भावपूर्ण सर्वोत्तम कृति के रूप में हमारे समक्ष आया है। महाराजजी की उपस्थिति के अनुभूत सत्य का साक्षात्कार हो, उनकी भावनाओं की ममतामयी दृष्टि, सत्संग का सत्-तत् हो, या हृदय की कोमलता का स्पर्श, परमानन्द की स्वीकृति हो, दुख की अनुभूति हो, महाराजजी के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है।

महाराजजी का निश्चल प्रेम, कृपा की कृपानुभूति का परिणाम, अपनेपन की सुखद स्मृतियाँ हैं, जो भक्तों और शिष्यों ने अपने शब्दों के माध्यम से व्यक्त की हैं। जीवन की अन्तर्स्थिति, मनःस्थिति और परिस्थिति को शब्दों की आवश्यकता ही नहीं है, मौन संवेदना महाराजजी के सामने आते ही स्वमुखरित होती रहती है। यह भी यहाँ स्पष्ट है। निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस पुस्तक के नामानुरूप महाराजजी के जीवन दर्शन को साकार रूप दिया गया है। वह सूक्ष्म दृष्टि भक्ति और समर्पण का एक सशक्त हस्ताक्षर है।

मानस जिनके हृदय में समाहित है, मानस जिनके श्वास में रहा है, ऐसे पूज्य महाराजजी के प्रति यह ग्रन्थ निश्चित ही आत्मसात् करने योग्य है, जिसमें जीवन की दिशा और दशा के सफल होने की पूर्ण सम्भावना है। महाराजजी की दृष्टि, उनका जीवन के प्रति दृष्टिकोण और भक्ति, श्रद्धा और विश्वास का अद्भुत संगम उनके व्यक्तित्व की विशेषता रही। स्वामी मैथिलीशरण जी द्वारा इस ग्रंथ का प्रकाशन भक्तों के लिये अमूल्य है। और स्वयं उनके लिये कृपा ! कृपा और कृपा का प्रसाद।

समीक्षिका – डॉ. जया सिंह, रायपुर

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक – कहानी नर्मदालय की 'शालेय शिक्षा का एक अनूठा प्रयास'

लेखिका – भारती ठाकुर (प्रव्राजिका विशुद्धानन्दा)

प्रकाशक – साप्ताहिक विवेक,५/१२, कामत औद्योगिक वसाहत, ३९६ स्वातन्त्र्यवीर, सावरकर मार्ग, प्रभा देवी, मुम्बई – ४०००२५, दूरभाष – ९५९४९६१८५८, पृष्ठ – २४०, मूल्य – २६०/-

कहानी नर्मदालय की 'शालेय शिक्षा का एक अनूठा प्रयास' भारती ठाकुर द्वारा लिखित एक प्रेरणादायक और भावनात्मक पुस्तक है। पूर्व लोकसभा अध्यक्ष सुमित्रा महाजन ने पुस्तक का पुरोवाक् लिखा है। पुस्तक मूलतः मराठी भाषा में लिखी गई है। वहीं, शुभदा मराठे ने पुस्तक का हिन्दी अनुवाद किया है। यह एक शासकीय सेविका की गाथा है, जो नर्मदा परिक्रमा के उद्देश्य से निकलती हैं, किन्तु स्वयं को नर्मदा के तट पर जीवन यापन करनेवाले बच्चों की शिक्षा के लिए अपना जीवन समर्पित कर देती हैं। यह पुस्तक न केवल समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठा का संदेश देती है, बल्कि इसमें मानवता, त्याग और समर्पण की अद्वितीय झलक भी दृष्टिगोचर होती है।

पुस्तक की विषय वस्तु भारती ठाकुर की नर्मदा परिक्रमा और उसके तटवासी बच्चों के जीवन और शिक्षा के अभिनव प्रयास के सन्दर्भ में है। भारती ठाकुर नर्मदा-परिक्रमा के दौरान वहाँ की गरीबी, अशिक्षा और समाज के पिछड़ेपन को देखकर उद्वेलित होती हैं। वे अपने जीवन को इन बच्चों की शिक्षा और उत्थान के लिए समर्पित कर देती हैं। शासकीय सेवा से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ग्रहण कर वे सदा के लिए नर्मदा के इस क्षेत्र को ही अपनी कर्मभूमि बनाती हैं। उन्होंने अपनी इस पुस्तक में उल्लेख किया है कि कैसे असंख्य चुनौतियों और सामाजिक अवरोधों के बावजूद अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे संघर्ष करती हैं और अन्त में सफल होती हैं। इस पुस्तक में लेखिका की चिर अन्तरंग सखी के समय-समय पर महत्त्वपूर्ण परामर्श भी मिलेंगे, जिससे पाठक प्रेरित होंगे। यह पुस्तक निम्नलिखित विशेषताओं से अलंकृत है –

१. नर्मदा परिक्रमा का सजीव वर्णन : पुस्तक में नर्मदा परिक्रमा की यात्रा को अत्यन्त सजीव रूप से प्रस्तुत किया गया है। लेखिका ने नदी के प्राकृतिक सौन्दर्य, उसके आध्यात्मिक महत्त्व और इस यात्रा में आनेवाली कठिनाईयों का ऐसा वर्णन किया है, जो पाठक के हृदय को स्पर्श करता है और उसे प्रभावित करता है।

२. नारी शक्ति और समर्पण : पुस्तक का केन्द्रीय पात्र नारी शक्ति का प्रतीक है। वे समाज की रूढ़ियों को पार कर दृढ़ संकल्प एवं समर्पण के बल पर नर्मदालय सदृश विराट सेवा प्रकल्प प्रारम्भ करती हैं। यह पुस्तक न केवल महिलाओं को प्रेरित करती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि सही सोच और प्रयास से किसी भी परिर्वतन को सम्भव बनाया जा सकता है।

३. शिक्षा का महत्त्व : पुस्तक का सबसे बड़ा सन्देश शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित करना है। नर्मदा-तट के बच्चों की अशिक्षा और गरीबी को लेकर लेखिका ने गहरी संवेदनशीलता के साथ लिखा है। यह कहानी शिक्षा को समाज के विकास के लिए सबसे प्रभावी साधन के रूप में प्रस्तुत करती है। वहीं, शिक्षा के व्यावहारिक अनुप्रयोग पर भी जोर देती है।

भारती ठाकुर की लेखन शैली सरल, सहज और प्रवाहपूर्ण है। वहीं, शुभदा मराठो ने हिन्दी भाषा में अनुदित करते हुए पुस्तक का मूल भाव बनाए रखा है। भाषा की गहनता जो पाठकों के हृदय को स्पर्श करती है। उन्होंने नर्मदा के तटों, वहाँ के ग्रामीण-जीवन और परिक्रमा के दृश्यों तथा प्रकृति का ऐसा सजीव चित्रण किया है, जो पुस्तक को जीवन्त बना देता है। यह पुस्तक जन-जन को वैयक्तिक स्वार्थ से परे जाकर लोकहिताय कार्य करने की प्रेरणा देती है। मुख्य रूप से आज के युग में एक अकेली नारी कैसे एक अपरिचित स्थान पर जाकर वहाँ के गरीब बच्चों की शिक्षा और उनके विकास हेतु शासन और जनता से संघर्ष करती है, इसकी एक झलक मिलती है। दीन-दुखियों, अभावग्रस्तों की सेवा करने के उत्सुक युवा-शक्ति के लिये यह पुस्तक एक प्रेरणा-ग्रन्थ है। लेखिका जिन्होंने समाज सेवा के साथ-साथ आत्मविकास, आत्मानुभूति हेतु आध्यात्मिक जीवन यापन करती हैं और समाज में प्रव्राजिका विशुद्धानन्दा के नाम से सुपरिचित हैं। इस अनुपम कृत्ति हेतु वे वन्दनीय हैं। उनकी यह पुस्तक पठनीय, संग्रहणीय है। आधुनिक युवक-युवतियों हेतु विशेष रूप से प्रेरणा का पुंज है।

समीक्षिका – नम्रता वर्मा, पी.आई.वी. विभाग, दिल्ली

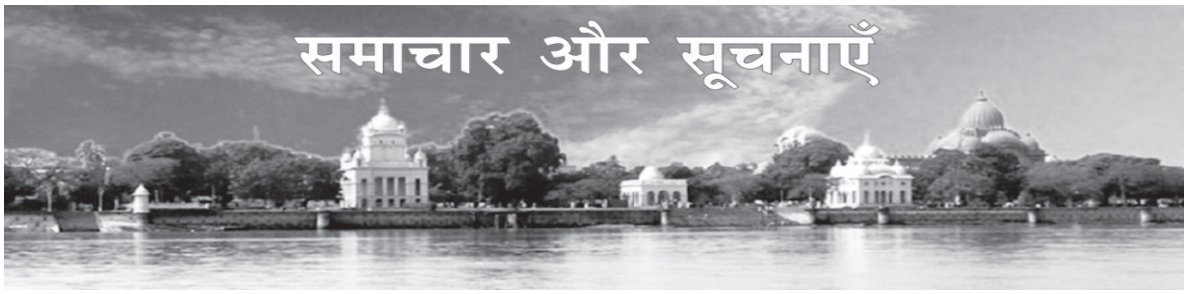

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर द्वारा शीतकालीन राहत-कार्य किया गया

१३ नवम्बर, २०२४ को **रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर** द्वारा रायपुर से १६८ किलोमीटर दूर कबीरधाम (कवर्धा) जिले के दो गाँवों सोनवाही और सरेण्डा में शीतकालीन राहत-कार्य किया गया। इसमें कुल १९८ परिवारों को उत्कृष्ट कोटि के कम्बल प्रदान किये गये।

रामकृष्ण कुटीर, अलमोड़ा में विविध कार्यक्रम सम्पन्न हुये

२ नवम्बर, २०२४ को ८ बजे **रामकृष्ण कुटीर, अलमोड़ा** में लिफ्ट का उद्घाटन सन्तों और भक्तों की उपस्थिति में रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के उपाध्यक्ष परम पूज्यपाद स्वामी सुहितानन्द जी महाराज ने किया। लिफ्ट का निर्माण अलमोड़ा के श्रीगार इन्फ्रा के द्वारा किया गया और पश्चिम बंगाल के गुराप के रायल इलीवेटर्स ने इलीवेटर प्रदान किया।

३ नवम्बर, २०२४ को प्रात: ८.३० बजे '**राम महाराज स्मृति भवन**' का उद्घाटन पूज्य पाद स्वामी सुहितानन्द जी महाराज द्वारा किया गया। राम महाराज लगभग ३० वर्षों तक रामकृष्ण कुटीर, अलमोड़ा के अध्यक्ष रहे। सम्पूर्ण कार्य का निरीक्षण प्रसिद्ध शिल्पकार डॉ. नीता दास के द्वारा किया गया।

इसी दिन पूज्य महाराज ने ९.१५ बजे चिल्कापेटा में पुनर्जीर्णोद्धारित तुरीयानन्द तपस्थली का भी लोकार्पण किया। इस कुटिया में १९१५-१६ में स्वामी तुरीयानन्द और स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने साधना की थी। वर्षों के अन्तराल में कुटीया जीर्ण-शीर्ण हो गयी थी, उसका श्रीरामकृष्ण कुटीर द्वारा पुन: जीर्णोद्धार किया गया।

३ नवम्बर, २०२४ को ११ बजे काकड़ीघाट में स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति का अनावरण संन्यासियों, भक्तों और स्थानीय लोगों की उपस्थिति में पूज्यपाद सुहितानन्द जी महाराज ने किया। यहाँ विवेकानन्द बाल परामर्श केन्द्र के बच्चों ने नाटक प्रस्तुत किया। स्वामी ध्रुवेशानन्द जी, स्वामी शुद्धिदानन्द जी ने संक्षिप्त व्याख्यान और स्वामी सुहितानन्द जी ने आशीर्वचन दिये। यहाँ के १३ मेधावी विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की गयी। आज ही अपराह्न ३ बजे से ५ बजे तक आध्यात्मिक शिविर का आयोजन किया गया,

जिसमें ६० लोग उपस्थित थे। सन्ध्या ६.३० बजे से ८.३० बजे तक एक सभा हुई। रामकृष्ण कुटीर, अलमोड़ा की स्मारिका का विमोचन पूज्यपाद स्वामी सुहितानन्द जी महाराज के द्वारा किया गया। इस अवसर पर स्वामी शुद्धिदानन्द जी महाराज ने पूज्यपाद रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ के परमाध्यक्ष स्वामी गौतमानन्द जी महाराज द्वारा प्रेषित आशीर्वचन पढ़कर सबको सुनाया। इस अवसर पर स्वामी शुद्धिदानन्द, स्वामी मायाधीशानन्द, स्वामी चन्द्रकान्तानन्द, स्वामी विश्वमयानन्द, स्वामी ज्ञाननिष्ठानन्द आदि ने अपनी उपस्थिति और विचारों से सभा को गौरवान्वित किया।

विश्व ध्यान दिवस का आयोजन हुआ

रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, राँची और इंडियन योग एसोसिएशन के संयुक्त तत्त्वावधान में **२१ दिसम्बर, २०२४** को आश्रम के सेमीनार हॉल में **विश्व ध्यान दिवस**

का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की मुख्य अतिथि झारखण्ड उच्च न्यायालय की न्यायाधीश अनुभा रावत चौधरी थीं। उन्होंने सबको प्रतिदिन ध्यान करने का संदेश दिया। इस कार्यक्रम में कुल ७५ लोगों ने भाग लिया, जिन्हें आश्रम के सचिव स्वामी भवेशानन्द जी ने ध्यान कराया।